टूटती इकाइयाँ

किन्तु कहाँ हैं वे हँसती हुई आँखें और चंचल बाहु और चौड़ी छाती और गर्म-गर्म मीठे होंठ जो इस चिर-भूखी नारी-देह की आदिम आग को शान्त करें ? कहाँ है वह नन्हा शिशु जो मातृत्व की प्यासी इस देह की सूखी छातियों को मीठे दूध से भर कर इन्हें पीन पयोधरों में बदल दे ?
ओ, कहाँ है तू, मेरे अदृश्य, अगोचर पुरुष !
ओ कहाँ है तू मेरे अजन्मे शिशु !!

—नारी

मुझे इस समय फिर लगता है कि तुम्हें पहचान नहीं पा रहा हूँ, या तुम्हारे जिस रूप को पहचानता रहा हूँ वह यह नहीं है इस समय तुम 'तुम' नहीं हो, लगता है, हजारों वर्ष आयु की एक बुढ़िया हजारों कोस पैदल चलने के कारण थक चुकी है, और अब अपनी मंजिल के आखिरी पड़ाव की ओर लड़खड़ाती हुई चली आ रही है।

—पुरुष

अब मुझे महसूस हो रहा था कि हम दोनों के बीच केवल एक देह का सम्बन्ध-सूत्र था उसी ने अब तक हम दोनों को एक साथ जोड़ रखा था अब वह सूत्र टूट चुका था, और चूँकि हमें एक साथ जोड़नेवाला और कोई सूत्र नहीं था इसलिए अब हम दोनों अपने-अपने दायरे में सिमटे अपना अलग अलग दिशाओं में बहने लगे थे।

—पत्नी

टूटती इकाइयाँ

[एक विशिष्ट कथा-प्रयोग]

शरद देवड़ा

अपरा प्रकाशन
कलकत्ता १

प्रथम संस्करण
जनवरी १९६४

Broadbent : I find the World quite good enough for me—rather a jolly place, in fact

Keegan (looking at him with quiet wonder) **:** you are satisfied ?

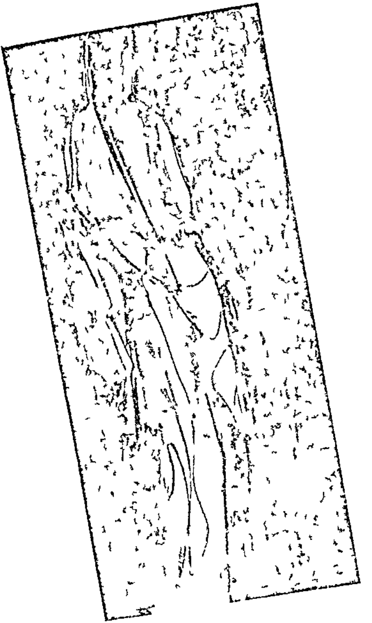
Broadbent : As a reasonable man yes I see no evils in the World—except of course, natural evils—that cannot be remedied by freedom, self government and English Institutions I think so not because I am an Englishman, but as a matter of common sense

Keegan : You feel at home in the World then ?

Broadbent : Of course Don t you ?

Keegan (from the very depth of his nature) **:** No

BERNARD SHAW
(John Bull's other Island, Act IV)



* * * नारी

ये पुरुष किस तरह नारी देह से खिलवाड़ करते हैं! समूची प्रदर्शनी के अस्सी प्रतिशत से अधिक चित्र नारी से सम्बन्धित थे जिनमें नारी-देह के विविध अंगों को विभिन्न कोणों से उभार कर दिखाया गया था। और विशेषकर वह चित्र! उफ, अब भी उसकी याद से सिहर उठती हूँ। दुही हुई गाय के थनों से लटकते स्तन, कमर के नीचे जरा-जरा फूला हण्डिया-सा पेट, ढीली-ढीली जाँघें और उनको ढके हुए दाहिने हाथ की हथेली। वह प्रौढ़ा नारी गर्दन बायीं ओर मोड़े इस अन्दाज में खड़ी थी मानो अपनी ही नग्न देह से बचना चाहती हो। लेकिन दर्शकों की निगाह थी कि अन्य चित्रों से होती हुई आखिर उसी पर आकर अटक जाती। बारीकी से उसका निरीक्षण करती, नीचे से ऊपर तक उसे परखती, और अन्ततः हथेली के पास आकर ठहर जाता। लेकिन जब उन्हें महसूस होता कि उस एक चित्र के सामने वे जरूरत से ज्यादा देर खड़े रह गये हैं और अन्य दृष्टियाँ कुतूहल से उन्हीं की ओर देख रही हैं तो वे मजबूरन वहाँ से हट जाते। पूरे हॉल का जल्दी जल्दी चक्कर लगाने और अन्त में फिर वहीं आ जमते और उसकी समूची नग्न देह पर उड़ती-सी दृष्टि डालकर आखिर हथेली पर पहुँचकर अटक जाते।

कला के नाम पर नारी देह की नग्नता का यह प्रदर्शन... और पुरुषों की भूखी निगाह!

जब से आर्टिस्ट्री हाउस से यह फोटो प्रदर्शनी देखकर लौटी हूँ, एक विचार मन में चक्कर काट रहा है: काश, एक ऐसा कमरा होता जो

केवल बाह्य अंगों को नहीं, केवल आँखों को नहीं, बल्कि आँखों के भीतर छिपे भावों को भी पढ़ पाती तो मैं इस पुरुष जाति की तथाकथित कलाप्रियता में छिपे ढोंग का भण्डा फोड़ देती, और नारी-देह को देखते समय इनकी आँखों में लुके छिपे विभिन्न भावों को कैमरे की आँख में बाँध लेती फिर उन नग्न आँखों की आर्टिस्टी हाउस में इसी तरह प्रदर्शनी करती।

*
*
*

आज जीवन के इस उन्तीस साला चौराहे पर खड़ी होकर पलटती हूँ और गुज़रे हुए जीवन-पथ पर दृष्टि डालती हूँ तो अनेक जोड़ी आँखों को अपनी ओर घूरते पाती हूँ।

गर्मी की उमस भरी रात और गाँव के मकान की छत पर बेखबर सोयी हुई मैं। अचानक आँख खुल जाती है तो खटिया के पास ज़मीन पर घुटनों के बल बैठे हुए चचेरे भाई को अपने ऊपर झुके हुए पाती हूँ। आज, सुदीर्घ अन्तराल के बाद साफ देखती हूँ कि उन आँखों में एक किशोर सुलभ उत्सुकता इस उम्र लड़की के प्रति एक अनबूझ जिज्ञासा के अतिरिक्त और कुछ नहीं था लेकिन तब मैं उन आँखों को देखकर मन में चीख उठी थी तो आसपास सोए चाचा चाची जाग उठे थे और उन्होंने बेचारे को बुरी तरह पीटा था। गुज़रे जीवन-पथ के उस छोर

से, वे एक जोड़ी विचार आँखें मुझे आज भी अपनी ओर उसी तरह घूरती दिखाई दे रही हैं।

गाँव से हाइस्कूल पास कर शहर में लड़कियों के कॉलेज में दाखिला लेने के लिए जब सक्रेटरी से मिलती हूँ तो वे आँखों में स्नेह भर कर मेरी ओर देखते हैं और अपने सफेद बालों में अंगुलियों से कंघी करते हुए मुझे अपने पास बुलाते हैं। मैं झिझकती हुई उनकी कुर्सी के पास जाती हूँ। वे स्नेह से मेरी पीठ पर, मेरे सिर पर हाथ फेरते हैं और मेरे बायें गाल को थपथपा कर आश्वासन देते हैं कि मुझे जब भी कोई तकलीफ हो, मैं निःसंकोच उनसे आकर बता दिया करूँ। यह कहते समय और मेरे गाल को थपथपाते समय, क्षण भर के लिए उनकी बूढ़ी आँखों में एक चमक आती है—स्नेह की नहीं, सुलगते अंगारे का फूँक मारने पर जैसी लपट निकलती है वैसी चमक और मैं सहमकर एक कदम पीछे हट जाती हूँ। इसके बाद कई दिनों तक मुझे लगता रहता है कि आग की वह लपट मेरा पीछा कर रही है मुझे चारों ओर से घूर रही है मुझे झुलसा देना चाहती है और परिणाम यह होता है कि मैं उसके बाद सेक्रेटरी के कमरे में कभी नहीं जाती।

कॉलेज लड़कियों का है और छात्रावास में भी केवल लड़कियाँ ही हैं, इसलिए समय हँसी-खुशी गुजरता जाता है। जब कभी कॉलेज या छात्रावास की दीवारों के बाहर की दुनिया में जाने का अवसर आता है—मसलन् सिनेमा, बाजार या पिकनिक आदि—तो मेरे साथ मेरी हम उम्र लड़कियों का दल होता है इसलिए हमारी ओर घूरती अनेक जोड़ी आँखों से मुझे कभी घबराहट नहीं महसूस होती।

मुझे नृत्य संगीत और ड्रामा में विशेष रुचि है, इसलिए कॉलेज के वार्षिकोत्सव और अन्य कार्यक्रमों में सक्रिय भाग लेती हूँ लेकिन ऐसे

अवसरों पर मैं अपने नृत्य या संगीत या अभिनय में इस कदर डूबी रहती हूँ कि मेरी देह के अंग अंग को भेदती सहस्रों जोड़ी निगाहों की तेज धार को भी मैं सहज ही सह जाती हूँ।

छात्रावास के हर कमरे में दो लड़कियों के रहने की व्यवस्था है। मेरी साथिन से एक युवक मिलने आया करता है। विजिटिंग आवर्स के समय जब दरबान उसके आने की खबर देता है मेरी साथिन हाथ का उपन्यास छत की ओर उछाल देती है और स्वयं भी उछलकर खड़ी हो जाती है। उसकी समस्त अलसाहट सहसा गायब हो जाती है और अंग-अंग नाच उठता है। वह जल्दी-जल्दी बालों पर ब्रश फेरती है चेहरे पर पाउडर के पफ मारती है और साड़ी बदलकर मुझे टाटा कहती हुई भागती-सी कमरे से निकल जाती है। कभी-कभी तो वह विजिटिंग आवर्स के आध घंटे के भीतर ही लौट आती है तब उसके हाथों में फूलों का गुलदस्ता होता है गालों पर गुलाल और होंठों पर हँसी-खुशी दोनों बहनें सह नृत्य कर रही होती हैं। कभी वह दो-तीन घंटे बाद लौटती है तब उसके जूड़े में चमेली के ताज़ा फूलों की वेणी होती है। वह आते ही पलंग पर धम से बैठ जाती है तकिये को छाती के नीचे बाँहों में भींचकर लेट जाती है और देर तक उसी तरह लेटी रहती है। फिर अपने-आप उन रंगीन घंटों की दास्तान सुनाने लगती है कि किस तरह पहले उन्होंने विक्टोरिया मेमोरियल के सामने से फूलों की वेणी ली फिर ट्रिंकाज में बैठकर नृत्य देखते हुए डिनर खाया। वह तकिया गोद में रखकर दोनों कुहनियाँ उस पर रख देती है और चेहरा हथेलियों में लेकर खिड़की के बाहर शून्य में ताकती हुई बताती है कि अब पढ़ाई में उसका मन नहीं लगता चाहती है कि कहीं एक छोटा-सा खूबसूरत-सा घर बसाए। मैं अन्यमनस्क-सी सुनती रहती हूँ जानती हूँ कि यहाँ भी मैं न हूँ और खाली कमरा रहे तब भी वह अपनी बात इसी तरह कहती रहेगी क्योंकि दरअसल वह सुना नहीं अपने आपसे कह रही होती है।

अचानक माँ की बीमारी का तार पाकर वह घर चली जाती है। शाम का दरवान उस युवक के आने की खबर देता है। एक बार तो इच्छा होती है कि दरवान से ही कहलवा दूँ, लेकिन न जाने क्या सोचकर मैं आइने के सामने खड़ी होकर खुद पर एक विहंगम दृष्टि डालती हूँ फिर अपनी खास पसन्द वाली साड़ी ब्लाउज निकालती हूँ। तयार होने के बाद पूरे पाँच मिनट तक आईने के सामने अपनी स्वयं का आगे-पीछे से देखती रहती हूँ, सतुष्टि और रुचिरा की मिली जुली मुस्कान मेरे होंठो पर आ जाती है।

'विजिटर्स रूम' में मुझे सहसा अपने सामने पाकर वह हड़बड़ाकर खड़ा हो जाता है। मैं बताती हूँ कि मैं तो अचानक तार पाकर घर चली गयी है। वह फूलों का गुल्दस्ता हाथ में लिये असमंजस में खड़ा रहता है और गर्दन नीची किये पखुड़ियाँ नोचता रहता है।

एक युवक के सामने अकेले होने का मेरा यह पहला ही अवसर है इसलिए मैं समझ नहीं पाती कि क्या करूँ। वह कुछ देर की चुप्पी के बाद मासूम नजरों से मेरी ओर देखता है और झिझकते हुए कहता है 'मैंने तो ट्रिकाज में आज शाम के लिए एक मेज रिजर्व करवा ली थी लेकिन, अब तो '

मुझसे कोई उत्तर न पाकर वह फिर उसी तरह गर्दन झुकाये पखुड़ियाँ तोड़ने लगता है। फिर जरा साहस करके अटकते-अटकते कहता है "अगर आपका आज कोई खास कार्यक्रम न हो और आपको आपत्ति न हो तो तो "

वह वाक्य अधूरा छोड़ देता है और अपराधी की मुद्रा में मेरी ओर देखता है। मेरे सामने अपनी उन हम-उम्र साथिनो की सूरत घूम जाती है जो अक्सर ही शाम को कोई न कोई बहाना बनाकर अपने मित्रों के साथ बाहर जाती हैं और लौटकर रंगीन शामो की दास्तान अन्य छात्राओं को

रहा ले-लेकर सुनाती हूँ लेकिन साथ ही मुझ एक अनजान किस्म का भय भी लगता है। इसी उधेड़बुन म म कोई उत्तर नहीं द पाती। युवक समझता है शायद मन उसक प्रस्ताव का बुरा मान लिया है इसलिए वह क्षमा मांगकर जाने लगता है। सहसा म निर्णय कर लेती हूँ। कहती हूँ आप दो मिनट रुकिए, म आती हूँ।

डिनर के बाद काफी पीते समय वह मज पर रखे मेरे हाथ को अपनी हथेली से दबाकर मेरा डान्स क लिए पूछता है। म इन्कारी म सिर हिलाती हू और हाथ हौले से खींच लेती हू।

लौटते समय वह सिरीन से सीधे छात्रावास नहीं आता। कार को रेड रोड की ओर मोड़ देता है और विक्टोरिया के बगल से होता हुआ लेक्स की ओर ड्राइव करता है। रास्त म एक बार अपने बायें हाथ से मेरा कंधा दबाकर रहस्य भरी हँसी हँसता है लेकिन म तत्काल उसका हाथ हटा देती हू।

लेक्स के किनारे वह गाड़ी की चाल धीमी कर लेता है। कहता है 'आपके साथ आज बहुत अच्छा लगा। आशा है हमारी यह पहली मुलाकात ही अन्तिम मुलाकात नहीं होगी।

मैं कहती हूँ लेकिन म तो एक दो दिन में लौट जाऊंगी।'

वह बिना दुविधा के कहता है म होस्टल नहीं आया करूंगा हम लोग मिलने क लिए दूसरी जगह तय कर लेंगे।'

मैं समझ नहीं पाती आश्चर्य म उसके चेहरे की ओर देखती हूँ। लेकिन 'दी' तो कहती थी आप दोनों जल्दी ही शादी करने वाले हैं!

वह विनीत बनता है इस शाम के पहले तक यही बात सच थी लेकिन बाद आपसे मिलने पर मुझे महसूस हुआ है कि मैं गलती पर था। आपके साथ गुजारी यह शाम मुझे सदा याद रहेगी।

सहसा उसकी आँखों में मुझे आग की वही लपट दिखाई देती है जो कभी बूढ़े सक्रेटरी की आँखों में दिखाई दी थी। न जाने मेरे भीतर कहाँ की दृढ़ता आ जाती है। कड़ाई से कहती हूँ, "मुझे होस्टल छोड़ दीजिये। अभी, इसी समय।'

वह घबड़ा जाता है। उसकी आँखों की आग तत्काल बुझ जाती है। वह रिरियाकर कहता है, 'देखिये, आप नाराज हो गयीं। मेरा मतलब यह नहीं था। मुझे माफ कर दीजिये।"

छात्रावास के दरवाजे के सामने कार रुकने ही मैं फुर्ती से उतर जाती हूँ, और बिना कुछ कहे भीतर चली जाती हूँ।

इसके बाद वे तीन दिन वह रोज आता है लेकिन मैं दरवान से मना करवा देती हूँ। चौथे दिन 'स' लौट आती है। मैं उससे सब बात बताकर कहती हूँ, 'मैं तो तुम्हारा ख्याल करके ही उसके साथ चली गयी थी। मुझे क्या पता था, वह ऐसा निकलेगा। दरअसल, ये लम्पट दिन भर दफ्तर में काम करके थक जाते हैं और शामें किसी 'स्वीट कम्पनी' में बिताना चाहते हैं। तुम्हारे इस सज्जन की भी यही मंजिल है और इधर तुम न जाने क्या-क्या सपने पाल रही हो!'

'स' तकिये में मुँह छुपाकर रोने लगती है।

उस दिन से, मेरे मन से पुरुषों की निगाहों में छिपे दानव का भय खत्म हो जाता है। अब मैं उनकी निगाहों से बचती नहीं, बल्कि सीधे उनके भीतर तक देखने की कोशिश करती हूँ कि इस ऊपरी परदे के नीचे वह दानव कितनी गहराई में छिपा बैठा है जो मौका पाते ही झट बढ़कर ऊपर आ जाता है।

कितना दिलचस्प होता है आँखों का यह खेल!

रस ऐसे सेर गुजाती हैं लेकिन साथ ही मन पर अनजाना किस्म का भय भी लगता है। इसी उधेड़बुन में वो उतर जाती है। सुबह सामझता है शायद मैंने उसका प्रस्ताव मान लिया है इसलिए वह क्षमा माँगकर जाने लगता है। मैं उससे विनय करती हूँ। कहती हूँ आप दा मिनट ठहरिए मैं आती हूँ।

फिर मैं जल्दी जल्दी बीते समय पर मन पर हाथ की अपनी हथेली से ... मनाने के लिए पूछता है। मैं ... सिर हिलाती हूँ और हाथ हो... ती हूँ।

लौटते समय वह ड्राइवर से साथ ... जाता है। बाहर ... रोड की ओर ... देता है और ... की ओर इशारा करता है। रास्ते में एक बार अपने बायें हाथ से मेरा कंधा दबाकर रहस्य भरी हँसी हँसता है ... मैं उसका हाथ हटा देती हूँ।

लकरा के किनारे पर गाड़ी की ... धीमी कर देता है। कहता है आपके साथ आज बहुत अच्छा लगा। आशा है हमारी यह पहली मुलाकात ही अन्तिम मुलाकात नहीं होगी।

मैं कहती हूँ लेकिन मैं तो ... लौट आऊँगी।

वह बिना दुविधा के कहता है मैं होस्टल नहीं आया करूँगा हम लोग मिलने के लिए दूसरी जगह तय कर लेंगे।

मैं समझ नहीं पाती आश्चर्य से उसके चेहरे की ओर देखती हूँ। लेकिन 'सा' तो कहती थी आप दोनों जल्दी ही शादी करने वाले हैं!'

वह बेझिझक कहता है इस शाम के पहले तक यही बात सच थी लेकिन आज आपसे मिलने पर मुझे महसूस हुआ है कि मैं गलती पर था। आपके साथ गुजारी यह शाम मुझे सदा याद रहेगी।

सहसा उसकी आखो म भूखे आग का वही लपट दिखाई देती है जो कभी बूढे सेक्रेटरी की आखा में दिखाइ दी थी। न जाने मेरे भीतर कहाँ की दल्ना आ जाती है। कडाई से कहती हूँ, "मुझे होस्टल छाड दीजिये। अभी, इसी समय।

वह घबडा जाता है। उसकी आँखा की आग तत्काल बुझ जाती है। वह रिरियाकर कहता है, 'देखिये, आप नाराज हो गयी। मेरा मशा यह नही था। मुझे माफ कर दीजिये।'

छात्रावास के दरवाज़े के सामने कार रुकते ही म फुर्ती से उतर जाती हूँ, और बिना कुछ कहे भीतर चली जाती हूँ।

इसके बाद वे तीन दिन वह रोज आता है लेकिन मैं दरबान स मना करवा देती हूँ। चौथे दिन 'स' लौट आती है। म उसस सब बाते बताकर कहती हूँ म तो तुम्हारा खयाल करके ही उसके साथ चली गयी थी। मुझे क्या पता था, वह ऐसा निकलेगा। दरअसल ये लक्ष्मीपुत्र दिन भर दफ्तरो में काम करके थक जाते है और शामें किसी स्वीट कम्पनी' में बिताना चाहते है। तुम्हारे दस मजन की भी यही मजिल है, और इधर तुम न जाने क्या-क्या सपने पाल रही हो।"

'स तकिये म मुह छुपाकर रोने लगती है।

उस दिन से मेरे मन म पुरुषा की निगाहा में छिपे दानव का भय खत्म हो जाता है। अब म उनकी निगाहा स बचती नही बल्कि सीधे उनके भीतर तक देखने की कोशिश करती हूँ कि इस ऊपरी परदे के नीचे वह दानव कितनी गहराई म छिपा बैठा है जो मौका पाते ही झट कूद कर ऊपर आ जाता है।

कितना दिलचस्प होता है आँखा का यह खेल।

पहले ही दिन यूनिवर्सिटी की क्लास में प्रवेश करते समय जो सज्जन निगाहें वे मन की मंशा में मेरी ओर उठती हैं कुछ तो फिर इसी भाव भरपूर दृष्टि से देखकर अपनी किताबों-कापियों पर झुक जाती हैं लेकिन कुछ इतनी ढीठ होती हैं कि मेरी हाईहील के साथ कदम से कदम मिलाकर चलती हैं और अगले बेंच पर मेरे बैठ जाने के बाद भी मेरे ऊपर जूड़े, गरदन और लो-कट ब्लाउज के कारण नंगी-नंगी पीठ और कमर पर उनकी तीक्ष्ण धार का आभास होता रहता है।

चूँकि मैं रोज़ जीन्स पहनकर आती हूँ इसलिए शायद उन्होंने मेरा नाम जीन्सवाली रख दिया है। पीछे की फुसफुसाहट के बीच कई बार इस शब्द के प्रयोग की भनक मेरे कानों में आती है। अनेक सहपाठी किताब या नोट्स के बहाने मुझसे बातचीत करने की भी कोशिश करते हैं और हर बात के साथ उनकी आँखों के कोनों और होंठों के कोने में मन गहरा रस आता है।

अपने एक सहपाठी की मुझे विशेष याद है। वह न तो नज़र उठाकर हमारी बेंच की ओर देखता है और न अपने साथियों की बातचीत या हँसी-मज़ाक में शामिल होता है। दीवार के पास सदा एक ही जगह बैठता है और बहुत कम बोलता है। अगर प्रोफ़ेसर उससे कुछ पूछ बैठता है तो उसके चेहरे पर घबराहट उभर आती है और वह हकलाने लगता है। एकाध बार ऐसा भी होता है कि क्लास में हमारी बेंचवालियों के अलावा और कोई नहीं रहता और अचानक (हालाँकि पूर्व-योजना के अनुसार जान-बूझकर) हमारी बेंच से कोई उससे कुछ पूछ बैठती है तो मारे संकोच के उसके मुँह से आवाज़ नहीं निकलती और लगता है उसका बस चले तो वह पास की दीवार ही में समा जाये। हमने उसका नाम गाँव की शरमीली बहू रख छोड़ा है।

एक दिन देखती हूँ कि शाम को जिस ट्राम से मैं होस्टल लौटती हूँ उसी में वह भी एक ओर खड़ा है। पहले दिन तो मैं ध्यान नहीं देती लेकिन इसके

बार अक्सर उसे रोज उसी ट्राम स जाते हुए लगती हूँ। जरा गौर करने पर पाती हूँ कि वह ट्राम स उतर कर पदल भी मेरे पीछे पीछे आता है और मेर वाइ० डब्लू० सी० ए० के होस्टल में घस जाने पर लौट जाता है। एक रोज म ट्राम स उतरकर मेट्रो सिनेमा के सामने चलते चलते सहसा रुक जाती हूँ और शो केस में लगे फिल्म के चित्र देखने लगती हू। वह भी पल भर ठिठककर खड़ा हो जाता है फिर भीड़ के साथ मेरे पास स हटता हुआ आग निकल जाता है और मोड़ की पान-दुकान पर रुक जाता है। म मोड से हाती हुई अपने हास्टल की ओर मुड जाती हू और सहसा यू० एस० आइ० एस० लाइब्रेरी के बगलवाली फोटो की दुकान म घुस जाती हू। वह दुकान के सामने से जल्दी-जल्दी चलता हुआ आगे बढ जाता है तो म दुकान स निकलकर उसके पीछे कुछ दूरी पर चलती हू। मझे इस खेल में अदभुत आनन्द आता है। वह अपनी आँखों से मुझे खोजता-सा भीड को चीरता आगे बढ़ता जाता है और एलाइट सिनमा के पास स गुजर कर क्षण भर के लिए होस्टल के सामने ठिठक जाता है। तभी म पीछे से पहुचती हूँ, और इस तरह मानो अचानक उसे देखा हो कहती हूँ अरे आप आज इधर कैसे?

वह इस तरह घबरा उठता है मानो चोरी करते पकडा गया हो। उसके मुह से एकाएक आवाज नही निकलती हकलाते हुए गदन नीची किये मुश्किल से कहता है जी बात यह है कि मैं यहाँ यू० एस० आइ० एस० लाइब्रेरी में पढने आया करता हूँ।

होठो पर आती हँसी को रोक कर म कहती हूँ, ओह, लेकिन लाइब्रेरी तो आप पीछे छोड़ आये हैं!'

उसकी घबराहट बढ़ जाती है। एक पापविद्ध निरस मैं आनन्द से मेरा मन नाच उठता है। चाहती हूँ वह एक बार गदन ऊँची करे तो उसकी आँखो को पढ़ सकू पुतलियो के भीतर झाँक कर देख सकू कि दाव किस गहराई में बठा हुआ है। लेकिन वह गदन ऊँची नही करता, बमुश्किल

हकलाते हुए कहता है ा यान यह है ि आज दफ्तर ंग ाना म
मिलने ाना है।

यहा म और प्रश्न न कर उठ ंग भय म व िताबा मन्दि ाना शाय
जान्ता है और उत्तर की प्रती ा िन बिता हा ज ा म ा र
चला जाता ह। म हौऊ म ह्गी ह।

मुझ आगे प्रश्न और औंा का किया क पीछ काय करन मनाविज्ञान क
विश्लपण करा का राग हा गया है। काम का िनारे प्रश्न का ागह
इस पठाड म मरा मन अधिक रमता है। हमार आधे दजा प्राफसर भी
मरी स सनक म नहा बच पाते। मुझे उनमें म विपकर एक या
अधिक याद है। त व वाव्ने ता उनक हाथ म धूर क छाट
उछलकर उनकी मूछा क झुरमुट में अटक जान और आँग
सिकुडकर वाली लकीर-सी रह जाना जिनक भीतर म व एकटक हमारी
बेंच की आर दखते हुए लेक्चर दिया करते । वकाम म और भी
बेंचे है इस महसूस करन की व जरूरत नहा समझते। चूकि व सबस
पुरान और प्रभावशाली प्राफसर हैं इसलिए किसा का पास फल करना
उनके हाथ म है और पिछले कुछ वर्षों के उदाहरण द्वारा व स्पष्ट कर चुके
ह कि फस्ट-क्लास फस्ट आन की योग्यता केवल छात्राआ में है ौर
छात्राआ में भी विशषकर उस छात्रा में जा उनक चक्कर क सबस ज्यादा
चक्कर लगा सकती है। बल्कि अक्सर होता यह है कि ाब चक्कर क
चक्कर लगाने की होड लग जाती है और फस्ट-क्लास फस्ट की
उम्मीदवारी एक से अधिक छात्राए करने लगती हैं तो उनमें से सबस
अधिक चक्कर लगानवाली का सवप्रथम स्थान क लिए चुनना पडता है
और तब का उसी क्रम स उसके बाद वाले स्थाना के लिए। इस तरह
अक्सर प्रथम तीन चार स्थान पहले स सुरक्षित हा जाते है।

एक बार मेरी एक साथिन मुझे उन 'कन्हैया' के फ्लैट पर ले जाती है। वे बड़े स्नेह से हमारा स्वागत करते हैं नौकर को आवाज़ देकर काफी बनाने का हुक्म देते हैं, और खुद पलंग पर बैठे 'चेन स्मोकिंग' करते रहते हैं। यहां, घर के पलंग पर उनकी आंखों की दरार कुछ बड़ी दिखाई देती है उनमें चमक भी अधिक है उनके मुंह से थूक के छींटे भी अधिक उछलते हैं जो कभी-कभी मूंछों के झुरमुट को पार कर हमारी साड़ियों पर भी आ गिरते हैं।

वे बड़े स्नेह से मेरी पढ़ाई के बारे में पूछते हैं और परीक्षा में सफलता-प्राप्ति के कई उपयोगी सुझाव देते हैं जिनमें एक यह भी है कि उन्हें अपने फ्लैट पर पूरा अवकाश रहता है मुझे अपनी पढ़ाई में जब कभी असुविधा हो, या कुछ पूछना हो निस्संकोच उनसे आकर पूछ लिया करूँ।

मुझे वे काफी दिलचस्प लगते हैं उनकी मूंछों का झुरमुट, थूक के छींटे सिर के खिचड़ी बाल और 'चेन स्मोकिंग'—दिलचस्पी के ये सब कारण तो हैं ही लेकिन मेरा सबसे अधिक ध्यान आकर्षित होता है उनकी आंखों की दरार से निकलती चमक की धार जो इस बीच कई रंग बदल चुकी होती है और हर रंग अपनी अलग कहानी कह रहा होता है।

वहां से लौटते समय मैं अकेली होती हूँ। मेरी साथिन को पढ़ाई सम्बन्धी कुछ मुश्किल प्रश्न पूछने हैं, इसलिए वह वहीं रुक जाती है।

प्रोफेसरों की जात में भी कैसे-कैसे विरोधाभास होते हैं! कितने विद्वान, सभ्य और सुसंस्कृत, कि उनकी गरिमा के अनेक ऊंचे-ऊंचे शिखर जिनके चरणों के पास बैठ कर समूचा जीवन गुजारा जा सकता है, लेकिन जब इनकी आंखों की ओर देखती हूँ, श्रद्धा का यह भाव तिरोहित हो जाता है,

और ये ऐसे छोटे छोटे निष्कर्ष निकलने लगते हैं जिन्हें मैं आसानी से उँगली पर गिना सकती हूँ।

आँखों के इस अध्ययन में मैं कभी-कभी तन्मय हो जाती हूँ। जब कभी आँखों का कोई खास जोड़ा देखती हूँ मुझे तरह-तरह की कैसी-कैसी विचित्र उपमाएँ सूझने लगती हैं। और इन्हीं का प्रभाव कभी-कभी मन पर इस कदर हावी हो जाता है कि उस समय स्थान और पात्रों को भूल जाती हूँ और मुझे ध्यान रहता है तो सिर्फ उन सामने के जोड़ा आँखों का। मुझे आँखों और इस तरह घूरते देखकर कभी-कभी सामनेवाला घबरा जाता है और अनेक गलतफहमियों की भी संभावना रहती है। लेकिन मुझे इसका होश नहीं रहता। मन पर एक अजीब-सा खुमार रहता है।

वाई० डब्लू० सी० ए० के होस्टल में भी मुझे इस शौक के लिए मसाला मिलता रहता है। मेरी सहवासिनियों के मिलने-जुलनेवालों में कई ऐसे दिलचस्प व्यक्ति हैं जिनकी आँखें मेरा ध्यान अपनी ओर खींचती हैं। मुझे एक सरदारजी की विशेष याद है। उनकी घनी दाढ़ी मूँछ और मोटी भौंहों के बीच अंगारे-सी दहकती आँखें देखती तो मंत्रमुग्ध-सी देखती ही रह जाती। सरदारजी अपनी बहन के साथ शॉपिंग पर और रेस्तराओं में ले जाने लगे हैं क्योंकि उनकी बहन जिद करके मुझे भी अपने साथ ले लेती है। रेस्तराँ में खाना या चाय कॉफी पीते समय सरदारजी मेरा विशेष खयाल रखते हैं। उनके आग्रह पर मैं भी किसी चीज से इनकार नहीं कर पाती क्योंकि मेरा ध्यान तो अंगारे-सी दहकती उनकी आँखों की ओर खिंचा रहता है। उन्हें देखकर मेरे सामने तत्काल चिड़ियाघर के सींखचों में बंद उस खूँखार शेर का डरावना चेहरा उभर आता है जिसकी आँखों की ओर देखते हुए आपको भय भी लगता है लेकिन साथ ही एक ऐसा आकर्षण भी कि आप अपनी दृष्टि हटा नहीं पाते।

मुझे भय लगने लगता है कि यह रोग मुझे किसी मुसीबत में न डाल दे। सरलारजी की हिसर आँखों का नाद क समय भी मरा पीछा नहीं छोडती। ऐसी दशा म म एम० ए० की परी राए देती हू और पास कर लेने पर उसी गर्ल्स कालेज में पढाने लगती हू जिसम म स्वय पढ़ी थी। साथ ही वह हास्टल छोडकर एक अलग पलट किराय पर ल लेती हू।

इस एकान्त फ्लैट म म धीरे धीरे काशिश करक इस रोग स पीछा छुडा लेता हू। यद्यपि यहाँ भी जब कभी सीढिया पर चढते उतरते समय ऊपर के फ्लैटवाला काला चश्मा और नीचे क फ्लैटवाली मोटे काँच की ऐनक देखती हू ता मरे ऊपर फिर वही जुनून सवार होने लगता है, इच्छा होती है एक बार इन काली और मोटी दीवारो का भेदकर उनकी पुतलिया क भीतर झाककर देखू तो कि उनके दानव किस गहराइ म छिपे बठे है, लेकिन अपनी पिछली दशा की याद कर म उस मोह पर काबू कर लेती हूँ और बिना उनकी आर देखे सीधा अपने रास्ते चली जाती हू।

*
*

समय के सुदीघ अन्तराल स आज जीवन क इस उत्ताम साल चौराह पर खडी होकर पलटती हूँ, तो मे अनक जानी आखे मझे आज भी अपना ओर घरती दिखाइ देती है। हर आँख का अपना अलग रग है अपनी अलग दास्तान है, लकिन एक बात उन सब म समान रूप से दृष्टिगत होती है—वह है नारी देह के प्रति भूख। भूख का यह दानव कभी विकराल जबडे निकाल ऊपर ही दिखाई द जाता है, लेकिन अक्सर यह नीचे पर्दे म छिपा बैठा रहता है, और ज्योंही शिकार दिखाई देता है,

यह उचक कर ऊपर आ जाता है और अपनी विकराल दाढ़ों से उसकी ओर झपटता है।

भूख! आदिम भूख!! नारी देह के प्रति निरी आदिम भूख!!! वैसी ही जैसी कि आज से हज़ारों-लाखों वर्ष पूर्व प्रागैतिहासिक युग के जंगली पुरुष में थी। अन्तर केवल इतना है कि अब उस पर सभ्यता का कला का ढोंग का मुखौटा चढ़ा रहा है। इस मुखौटे के नीचे छिपा हुआ आदिम भूख का दानव जब आवरण फाड़कर ऊपर आता है तो कितना विकराल और घिनौना दिखाई देता है।

काश कोई ऐसा कैमरा होता जो केवल बाहरी अंगों की नहीं केवल ऊपरी आँखों की नहीं बल्कि आँखों में छिपे बैठे इस दानव की इसके विभिन्न रंगों और रूपों में सही तस्वीर खींच पाता तो मैं उन तस्वीरों की आर्टिस्ट्री हाउस में प्रदर्शनी करती और पुरुष जाति की तथाकथित कला-प्रियता के ढोंग का नग्न रूप दुनिया के सामने खोलकर रख देती!

*
*
*

लेकिन आज जब जीवन के छत्तीस साल पूरे कर चुकी तो महसूस करती हूँ कि क्या यह भूख केवल पुरुष में होती है नारी में नहीं होती? और स्पष्ट पूछूँ तो क्या यह मुझमें नहीं है? क्या अपनी देह की परतों के नीचे छिपी इस आदिम आग को वहाँ दबाये रखने के लिए ही मैंने आज

तक कृत्रिम साधनों का सहारा नहीं लिया है ? क्या इसीलिए नृत्य नहीं सीखा ? क्यों स्वयं को चित्रकला की रेखाओं में उलझाये नहीं रखा ? संगीत के सुरों में खुद को भरमाये रखने की कोशिश नहीं की ? और, क्या इसीलिए आजकल इन किताबों में स्वयं को नहीं डुबोये रखती हूँ ? मैं कई सामाजिक और सांस्कृतिक संस्थाओं से सम्बद्ध हूँ मैंने ड्रामा में भाग लिया है और काल्पनिक पात्रों का जीवन जीने में स्वयं को खाने का प्रयत्न किया है। आखिर क्यों ? क्या इसीलिए नहीं कि इस बडवानल की लपटों को नीचे ही दबाये रख सकूँ ? और ऐसा तो नहीं कि मैं एकदम असफल ही रही हूँ। सच ही मैंने इन कलाओं में कुछ समय के लिए सुकून महसूस किया है लेकिन गलती यह हुई कि मैंने इनसे अधिक की उम्मीद कर ली थी, सोच लिया था कि इन्हीं के सहारे अपना पूरा जीवन गुजार दूँगी। अफसोस यह छलावा था आत्म प्रवंचना थी। मैंने अपने जीवन के खोखलेपन को इनसे भरना चाहा था, लेकिन चलनी के असंख्य छिद्रों की तरह ये झर गयी, और मैं अब भी वैसी की वैसी रीता हूँ।

कमरे की दीवारों पर झूलते ये चित्र जिन पर मैं गर्व किया करती थी आज कितने अर्थहीन लगते हैं ! कोने में रखा सितार गाल-हण्डिया सा बेजान मालूम देता है ! कांच की आलमारी में रखे घुंघरू कितने बेमानी लगते हैं और शेल्फ में करीने से सजी किताबें कितनी निर्जीव !!

कमरे का सूनापन एक भारी शिला की तरह मेरे मन प्राण को पीस रहा है।

इस आधी रात के समय भी, सडक पर ट्राम और बसों का शोर है, लोगों की आवाजें हैं जीवन की चीख-पुकार है। लेकिन मेरा यह कमरा कितना खाली है, कितना खोखला है—ठीक मेरी खोखली और खाली

देह की तरह। मेरी मृत आत्मा की तरह कमरे में भी एक भयावह सन्नाटा है।

आधुनिक डिज़ाइन के बने हुए स्प्रिंगदार पलंग के डनलपिलो गद्दे पर पड़ी हुई मैं जलहीन मछली-सी तड़प रही हूँ। तकिये को दोनों बाँहों में भींचकर छाती के नीचे दबा कर दबा रही हूँ और निःश्वास ले रही हूँ। मेरा पोर-पोर एक अबूझ पीड़ा से ऐंठ रहा है। कितना चाहती हूँ मैं, कि कोई इस समय अपनी सबल बाहों में भरकर मेरी इस देह को भींच, कसे और कसता चला जाय कसता चला जाय यहाँ तक कि मेरी देह का जोड़-जोड़ खुलकर अलग हो जाय बिखर जाय। लेकिन, कहाँ है वह 'कोई'?

ऐसा तो नहीं कि मैं इस दर्द का कारण नहीं जानती यानि मुझे निदान का पता नहीं। नहीं, निदान दिन के प्रकाश-सा स्पष्ट है। कुछ कमज़ोर क्षणों में सोचने भी लगती हूँ कि जो नियति सामान्यतः हर नारी की होती है उसे मैं भी स्वीकार कर लूँ लेकिन जब ऊपर के फ्लैट पर दिन रात बच्चों की चिल्लपों सुनती हूँ और फ्लैटवाली को अपने पीछे पाँच बच्चों की कतार लगाये और छठवें से पेट फुलाये भारी कदमों से सीढ़ियाँ उतरते देखती हूँ, या नीचे वाले फ्लैट से मार-पीट के धमाके और गृहिणी के सुबक-सुबक कर रोने की आवाज़ सुनती हूँ तो इस सर्व-सुलभ निदान के प्रति मेरा उत्साह खत्म हो जाता है। फिर भी, कभी-कभी सोचने लगती हूँ कि जब नारी मात्र की यही नियति है तो मैं ही इन अनिश्चित खतरों से क्या डरूँ? लेकिन सवाल केवल इन अनिश्चित खतरों का ही तो नहीं है। सवाल मेरी स्वाधीनता का भी है प्रश्न मेरे अहं का भी है। मान लो स्वाधीनता की भी बलि दे दूँ, अहं को भी भुला दूँ। लेकिन कहाँ है वह उपयुक्त साथी जिसके हाथों में मैं अपनी जीवन-नौका की पतवार थमा दूँ और निश्चिन्त होकर अपने अस्तित्व को भूल जाऊँ उसके व्यक्तित्व में अपने को एकाकार कर दूँ—कहाँ है ऐसा व्यक्ति? कैसे खोजूँ उसे?

तो क्या इसी तरह पूरा जीवन गुजार दू ? जिस तरह कि जीवन के ये पिछले उन्तीस पतझड बीत है ? लेकिन अब तक तो उठती आयु का उत्साह था देह में जोर था, और जीवन को एक आन्दवानी ढर्रे पर ढालन के सपन थे। लेकिन अब उन सपनो का मोह भग हो चुका है और देह म ढलती आयु का अहसास है जिसके लक्षण दिन पर दिन अधिक स्पष्ट होते जाते है।

अभी उस दिन सुबह उठकर देह तोडती हुई आईने के सामने खडी हो गई थी तो सहसा स्वय को पहचान नही सकी था। ज्यो की-त्यो ठगी सी खडी रह गयी थी। अचानक पहली बार महसूस हुआ कि मेरी देह को यह क्या होता जा रहा है! सिर के लम्बे-लम्बे केश पता नहा कब इतन अधिक झड गये थे और कनपटिया के पास से सफेद होन लगे थे। गालो पर ये मुहासे और फुसियाँ कब और कहा स उग आय ? बडी बडी तरल आखें जो कभी सभा-सोसाइटियो में चर्चा का विषय बनी हुई थी, आज उन्ही पर कसी एक सफेद परत आ चढी है और नीचे स्याह धारियाँ बन गयी हैं। होठो पर भूरे बाल उग आय है, वक्ष ढीले होकर झूल गये हैं और देह एक प्रौढा की तरह फली फैली, पसरी-पसरी लगती है। अपना अनावृत देह (मुझे सदा ही विवस्त्रा सोना पसन्द रहा है) की यह भयावनी असलियत देख म चेहरा हाथो में छुपाकर सिमक उठी। क्या शृगार मेज पर सजे हुए ये समस्त सौदय प्रसाधन भी मेरी ढलती देह यष्टि को बाँध रखने में समथ नही हो सकते ? क्या धीरे धीरे उजाड होती यह धरती यो ही बजर रह जायगी ? कहाँ है तू ओ वर्षा के पहले बादल, जो सदियो स प्यासी इस धरा को अपनी पहली बौछार स तप्त कर दे ? ओ, कहाँ है तू ? तू ?

क्या यही वह आदर्शवादी जीवन है जिसके म कभी सपने देखा करती थी ? बेवकूफ लडकियो को रोज रोज वही एक पाठ पढाना जो मेरे मन प्राण को नीरियत से भर देता है! शाम को थकी हुई, और ऊबी हुई, जब

कॉलेज के गेट से बाहर निकलती हूँ तो घर में बस-स्टाप तक आने की भी ताकत नहीं रहती, न मन में घर लौटने का उत्साह ही रहता है। आखिर किसके लिए घर लौटूँ? उस बूढ़ी नौकरानी के लिए जिसका मरा हुआ चेहरा देखते ही मुझे कोफ्त होती है। इस कोफ्त से बचने के लिए ही मैं किसी मित्र के साथ रेस्त्रां के रंगीन और जादुई माहौल में जाकर बैठ जाती हूँ। अगर कोई खास मित्र तत्काल उपलब्ध नहीं होता तो कॉफी हाउस जाकर अनेक मित्रों के ग्रुप में शामिल हो जाती हूँ। लेकिन कब तक! आखिर सभी उठ-उठकर जाने लगते हैं तो मुझे भी बेमन से उठना पड़ता है। तब घर की सीढ़ियाँ चढ़कर निर्जीव अंगुली से अपने फ्लैट के दरवाजे पर लगी घंटी टीपती हूँ तो पापड़ मुँह से न जाने क्या बड़बड़ाती हुई बुढ़िया दरवाज़ा खोलती है, और उसका सड़ा हुआ चेहरा देखते ही मेरा पोर-पोर एक अबूझ घृणा से सिहर उठता है।

क्या मेरा नारी मन यह नहीं चाहता कि कॉलेज की क्लासेज खत्म होते ही जल्दी-जल्दी घर की ओर दौड़ पड़ूँ और उत्साह में भरकर एक ही फलांग में कई-कई सीढ़ियाँ चढ़ती हुई अपनी पूरी हथेली के जोर से दरवाज़े की घंटी दबाऊँ तो दरवाज़ा खोलकर दो हँसती हुई आँखें मेरा स्वागत करें, दो फड़कते हुए सबल बाहु अपने घेरे में लेकर मुझे छाती में छुपा लें, दो गरम-गरम मीठे होंठ आतुरता से मेरे फड़कते होंठों पर आ चिपकें?

क्या मेरा यह चाहना गुनाह है कि मेरे इस सूने कमरे में किलकारियाँ मारता एक नन्हा-सा शिशु हो जो मुझे देखते ही अपने प्यारे-प्यारे गुड़िया जैसे हाथ भरी ओर फैला दे और मैं हुलसकर उसे बाँहों में भर लूँ, वक्ष में छुपा लूँ, इन सूखी छातियों की जगह रस में पगे पयोधर हों जिन्हें वह शैतान अपने नन्हें-नन्हें हाथों में भरकर झिंझोड़े और होंठों से चूसे और दाँतों से काटे... झिंझोड़े और चूसे, और काटे??

किन्तु, [काश, जीवन में यह किन्तु नहीं होता!] कहाँ हैं वे हँसती हुई आँखें और सबल बाहु और चौड़ी छाती और गर्म गर्म मीठे होंठ जो इस चिर भूखी नारी देह की आदिम आग को शान्त करें? कहाँ है वह नन्हा शिशु जो मातृत्व की प्यासी इस देह की सूखी छातियों को मीठे दूध से भर कर इन्हें पीन पयोधरों में बदल दे?

ओ, कहाँ है तू मेरे अदृश्य अगोचर पुरुष!
ओ, कहाँ है तू, मेरे अजन्मे शिशु!!

*
*
*

तुम! नहीं, नहीं, तुम नहीं हो सकते। जिसे हम 'गाँव की शरमीली वहू' कहा करते थे, जो लड़की मात्र की सूरत देखते ही मारे सकोच के बगल की दीवार में समा जाना चाहता था, प्रोफेसर के कुछ पूछ लेने पर घबराहट से काँपने लगता था, और हकलाहट के कारण जिसके मुँह से शब्द नहीं निकलते थे। नहीं, नहीं, तुम वह कैसे हो सकते हो!

तुम मंच पर सम्मान्य अतिथि के रूप में बैठे हो। तुम्हारे गले में फूलों का हार है। तुम पूरे आत्म विश्वास के साथ माइक के सामने खड़े होकर बोलते हो, हकलाहट तो दूर, तुम्हारे चेहरे पर किसी किस्म की घबराहट का भी चिह्न नहीं है। कुशल वक्ता की तरह तुम बीच-बीच में ऐसी चुटकियाँ भी लेते जाते हो जिससे दर्शकों में हँसी और प्रशंसा की लहरियाँ दौड़ जाती हैं। नहीं, तुम वह कैसे हो सकते हो!

लेकिन, क्या मेरी आँखें इतना बड़ा धोखा खा सकती हैं? चेहरा वही है हालांकि अब उस पर अनुभव, आत्म विश्वास और प्रौढ़ता की छाप है। कद पहले से कुछ लम्बा हो गया है। रंग भी अपेक्षाकृत स्वस्थ और भरी भरी है और बढ़िया सूट और टाई ने तुम्हारे व्यक्तित्व को निखार दिया है। ये सब परिवर्तन स्पष्ट हैं लेकिन ऐसे तो नहीं कि मूल व्यक्ति ही पहिचान में नहीं आये?

कार्यक्रम की समाप्ति के बाद मैं खुद को रोक नहीं पाती मंच पर चली जाती हूँ। जब तुम्हारे सामने से गुज़रती हूँ तो पल भर के लिए ठिठक जाती हूँ। तत्काल तुम्हारा चेहरा पूर्व-परिचय की मुस्कान से खिल उठता है, बड़े कलात्मक ढंग से तुम्हारे दोनों हाथ जुड़ जाते हैं, मुँह से निकलता है। अरे आप!

मैं भी हल्के से मुस्कराकर हाथ जोड़ देती हूँ।

मेरी सुरुचिपूर्ण पोशाक, बहुत सतर्कता से किये हुए मेकअप वाले चेहरे और चमेली के ताज़ा फूलों की वेणी की ओर तुम प्रशंसात्मक निगाहों से देखते हो।

हम पुराने दिनों की याद ताज़ा करते हैं। तुम बताते हो कि एम० ए० की परीक्षाएं देने के बाद किन संघर्षों से गुज़र कर आज इस स्थिति तक पहुँचे हो। मैं संक्षेप में अपना इतिहास दुहराती हूँ। फिर तुम्हें अपने घर का पता बताती हूँ और अगले दिन शाम की चाय साथ पीने के लिए तुम्हें आमन्त्रित करती हूँ।

अगले दिन तीन बजे क्लासेज़ खत्म होते ही मैं जल्दी-जल्दी घर पहुँचती हूँ और उत्साह के मारे एक ही फलांग में कई-कई सीढ़ियाँ चढ़कर दरवाज़े की घंटी हथेली से पूरे ज़ोर से दबाती हूँ। भीतर से बुढ़िया के बड़-

बहाने की आवाज आती है और दरवाजा खुलता है। लेकिन आज मुझे बुढ़िया का चेहरा मढ़ा हुआ नहीं लगता, कोफ्त भी नहीं होती। मुझे जीवन में पहली बार कॉलेज से इतनी जल्दी घर आयी देखकर बुढ़िया की बड़बड़ाहट उसके पोपले मुह में ही दबी रह जाती है वह भौंचक खड़ी मुझे देखती है। मै एक हाथ से उसे हटाकर भीतर घुसती हूँ, कमरे में जाकर किताबें मेज पर फेंक देती हूँ और एक बार गोल घूमकर पूरे कमरे का निरीक्षण करती हूँ। फिर आकर कमरे के चारों ओर लपट लेती हूँ और बुढ़िया की ओर पलटती हूँ। वह आश्चर्य से मुह बाये कमरे के दरवाजे पर खड़ी है। मै उससे झाड़ू लाने के लिए कहती हूँ वह झाड़ू लाकर देती है तो उसे कुछ रुपये देकर नाश्ते का जरूरी सामान लाने बाजार भेज देती हूँ। उसके जाते ही मै दरवाजा बन्द कर लेती हूँ। दीवारों पर टंगे चित्रों को उतार कर साड़ी से पोछती हूँ किताबों और खिड़कियों की गर्द झाड़ती हूँ मेज और सितार को रगड़ रगड़ कर साफ करती हूँ कमरे के कोनों में लगे जाले हटाती हूँ, और फर्श के कालीन को पीट-पीटकर ढेरों धूल निकालती हूँ। कमरे की सफाई हो जाने पर मै खिड़कियों और दरवाजों के पर्दे बदलती हूँ मेजपोश नया लगाती हूँ सोफों के गद्दों पर नये खोल चढ़ाती हूँ।

सफाई और सजावट पूरी हो जाने पर मै एड़ी के बल गोल घूमकर फिर से पूरे कमरे का निरीक्षण करती हूँ, तब आईने के सामने जाकर खड़ी हो जाती हूँ। धूल और गर्द में पुते हुए चेहरे को देखकर मै एकबारगी पहचान नहीं पाती लगता है यह किसी और का चेहरा है, इसलिए नहीं कि इस चेहरे पर धूल और मिट्टी लगी है, बल्कि इसलिए कि इस चेहरे पर मुझे अपने चेहरे वाले मुहासे और फुंसियाँ दिखाई नहीं देते, आँखों के नीचे की स्याह धारियाँ भी नजर नहीं आतीं और समूचे चेहरे पर नव यौवन की दीप्ति झलकती दिखाई देती है। मै काफी देर तक आईने के सामने खड़ी मुग्ध-सी देखती रहती हूँ। जब बुढ़िया लौटती है तो

उसे नारने के आइम्म बनाती हू और गुन बायरूम में घुसकर समची देह को रगड़ रगड़ कर नहाती हूँ। नहाकर अपनी विशेष पसन्द के सफेद रेशमवाल साडी-ब्लाउज पहनती हूँ और जतन से मेकअप करती हूँ। तुमने साढे पाँच बजे आने का समय दिया है अभी सवा पाँच बजे हैं और म तुम्हारे स्वागत के लिए तयार होकर आईने के सामने खडी हू।

म पुरुषा के सम्पर्क में आती रही हूँ और साहित्यिक-सामाजिक कायक्रमो के सिलसिले में मुझे अनेक तरह के लोगो स मिलने जुलने के अवसर मिलते रहे हैं लेकिन इस तरह की उत्कठा और घबराहट एक अनजान बचनी का अनुभव मने कभी नहा किया। यह पन्द्रह मिनट का समय काटना मेरे लिए पहाड हो जाता है। कमरे में इधर से उधर चक्कर लगाते हुए म इस बीच कितनी ही बार आतुरता स घडी देख चुकी हूँ लकिन लगता है घडी की सुइया सरकने का नाम ही नहीं लती। मेरे कान सडक की ओर लगे हैं फ्लट के नीचे स गुजरने वाली हर मोटर की आवाज़ के साथ मेरे कदम रुक जाते हैं और म कान लगाकर ध्यान स सुनती हू, लेकिन जब आवाज़ वहाँ रुकने की जगह आगे बढ जाती है, तो म फिर दूनी बचनी स चहलकदमी करने लगती हूँ।

इन पन्द्रह मिनटो में म कइ बार आईने में खुद को निरख-परख कर मेकअप में रह गयी किन्हीं अनजान कमिया को सुधार चुकी हू।

घडी का बडा काटा जब ६ की सख्या स आगे सरकने लगता है तो मेरी उद्विग्नता बेहद बढ जाती है। मुझे जाने कसी-कसी आशकाएँ होने लगती हैं म अपने-आपको रोक नहीं पाती और खिडकी में लगे जाली के परदे से आख लगाकर सडक की आर देखती हूँ तभी मेरे फ्लट के नीचे एक टक्सी रुकती है उसम से आसमानी रग का सूट और उसी रग की टाई पहने तुम बाहर निकलते हो और जेब से पर्स निकालकर

टैक्सी का किराया देते हो। फिर पल भर ठिठक, गर्दन उठाकर, ऊपर फ्लैट की खिड़की की ओर देखते हो। मैं जाली के पर्दे के इस पार हूँ, जानती हूँ कि तुम मुझे देख नहीं सकते, फिर भी एकाएक मेरी साँस बन्द हो जाती है और सीने में धक धक की आवाज़ मुझे साफ सुनाई देती है। तुम सधे कदमों से दरवाजे की ओर बढ़ते हो। सीढ़ियों पर तुम्हारे जूतों की आवाज सुनाई देती है। एक तल्ले पर मेरे दरवाजे के सामने आकर जूतों की आवाज बन्द हो जाती है। मैं साँस रोके घंटी की आवाज़ की प्रतीक्षा करती हूँ, कल्पना करती हूँ कि तुम दरवाज़े के सामने खड़े हुए मेरी नेम-प्लेट को हाथ से छूकर देख रहे हो, तुम्हारा हाथ घंटी की ओर बढ़ रहा है घंटी के बटन पर अपनी अंगुली रखे तुम कुछ सोचते-से खड़े हो और

ट्री ट्री की आवाज सुनकर मैं इस तरह चौंक उठती हूँ गोया किसी ने गहरी नींद से झकझोर कर जगा दिया हो। हड़बड़ाकर दरवाजे की ओर बढ़ती हूँ, परदा उठाकर बाहर निकलना चाहती हूँ कि फिर पलट आती हूँ और आईने के सामने खड़ी होकर खुद पर अंतिम नज़र डालती हूँ, माथे से हट गयी लट को सावधानीपूर्वक माथे पर लाती हूँ, वेणी को दोनों हाथों से छूकर देखती हूँ और भागती हुई-सी जाकर दरवाज़े की सिटकनी खोल देती हूँ।

बड़े कलात्मक ढंग से दोनों हाथ जोड़कर, तुम मुस्कुराते चेहरे से मुझे ऊपर से नीचे तक देखते हो, और देखते ही रह जाते हो मेरे माथे की लट पर से तुम्हारी निगाहें जैसे हटना ही नहीं चाहतीं।

मैं सकुचाकर एक कदम पीछे हटती हूँ, कहती हूँ, 'आइये।'

बिना पलटे ही समझ जाती हूँ कि तुम पीछे-पीछे आते हुए मेरे जूड़े में लगी चमेली के ताजा फूलों की वेणी ब्लाउज़ के ऊपर की अनावृत पीठ और

नीच की अनावृत कमर का प्रगामात्मक दृष्टि म देख रह हा। तुम्हारी दृष्टि के स्पर्श स मुझे अपनी गर्दन और पीठ और कमर पर गुनगुना-सी महसूस हाती है। म जल्दी स पर्दा हटाकर कमर में दाखिल हाती हू, और हाथ स पर्दा हटाये एक आर खड़ी हा जाती हूँ।

तुम भीतर कदम रखत हा तुम्हारी कुशाग्र आँखें एक हा दृष्टि में अन्दर के हर सामान का सरसरी तौर पर निरीक्षण कर लेती हैं। तुम मध्य कमरा स कमर क बीच में आकर कालीन पर खड़ हा जात हा और वहा खड़े-खड़े गोल घूमकर एक बार फिर हर चीज का दखत हा। फिर दीवार पर टँग उस चित्र क पास जात हा जिसमें कश्मीर की डल झील में शिकारे पर चप्पू चलाता एक कश्मीरी बालिका का दृश्य अंकित है। गौर से चित्र को देखने क बाद तुम एडियाँ ऊँची उठाकर चित्र पर लिखा नाम पढते हा तत्काल पलटकर मरी आर देखने हा और आश्चर्य-मिश्रित आल्हाद भरे स्वर में पूछते हो अरे क्या तुमने बनाया है यह चित्र ?

म स्वीकृति में सिर हिलाती हू। तुम्हारी आखा में झाँकती प्रशसा को लक्ष्य कर मुझे आज पहली बार इस चित्र के बनाने की सार्थकता का अहसास होता है।

तुम दीवार पर टगें अन्य चित्रा का भी एक-एक कर गौर स देखते हा और हर बार पलट कर प्रशसा भरी दृष्टि स मुझे देखते हो। म दृष्टि क उस स्पर्श से विभोर हो हो उठती हू।

चित्रा क बाद तुम कोने में रखे सितार को दखते हो और उसके तारा को छूकर एक हल्का कम्पन पदा करत हो।

फिर तुम झुककर काँच के पल्ला वाली छोटी आलमारी में झाकते हो, और वहाँ घुघरुआ की जोडी देखकर अपनी प्रश्नसूचक निगाहें मरी ओर

उठाते हो। मैं लजाकर कहती हूँ "कॉलेज के दिनों में मुझे नृत्य का शौक था, ये सब मेडल्स और कप्स मुझे उन्हीं दिनों उपहार-स्वरूप मिले थे।"

मैं अल्मारी में घुंघरुओं के आसपास रखे मेडल्स और कप्स की ओर संकेत करती हूँ।

तुम प्रशंसा की भरपूर नजर से मुझे देखते हो और देखते रहते हो। मैं उस दृष्टि की विभोरता से अस्त-व्यस्त-सी हो उठती हूँ। जल्दी से कहती हूँ "आप बैठिये, मैं चाय ले आती हूँ।

मैं जाने लगती हूँ कि तुम्हारी आवाज सुनकर रुक जाती हूँ, 'सुनो, एक अनुरोध है।'

मैं पलट कर खड़ी हो जाती हूँ। तुम एक कदम मेरी ओर बढ़कर अपनत्व से कहते हो 'देखो हम दोनों साथ पढ़े हुए हैं। तुम्हारा यह आप कहना क्या तुम्हें अच्छा लगता है?'

तुम्हारे शब्दों की और दृष्टि की अपनत्व मेरी देह के तारों को झंकृत कर देता है। इच्छा होती है, अपने छात्र-जीवन के दिनों की तरह झूम-झूम कर नाच उठूं। लेकिन प्रकट में मैं कुछ उत्तर नहीं देती और नृत्य की मुद्रा में थिरकते पगों से किचन की ओर चली जाती हूँ।

पाँच-सात मिनट बाद दोनों हाथों में प्लेटें लिये आती हूँ तो तुम्हें मेज के पास खड़े हुए एक किताब के पन्ने पलटते पाती हूँ। खुली किताब हाथों में लिये तुम चुपचाप मेरी ओर देखते हो। मैं प्लेटों को मेज पर रख देती हूँ तो तुम बायें हाथ में किताब लिये दाहिना हाथ मेरे कंधे पर रख देते हो, 'तुम सचमुच, तुम हो।"

मैं समझते हुए भी न समझने की तरह तुम्हारे मुँह की ओर देखती हूँ। *तुम अपना हाथ हटा लेते हो और पुस्तक का दाहिना पृष्ठ खोलकर* दिखाते हो, 'यह किसका नाम है?'

म चुप रहती हूँ। कोई जवाब देते नहा बनता।

तुम आजिजी स कहत हो अच्छा तुम्हें आपत्ति न हो तो इनमें स एक गीत सुनाओ न !

पहले चाय पी लो कहकर म चाय की ट्रे लान किचन की ओर चली जाती हूँ।

चाय-नाश्ते क बाद तुम फिर गीत सुनान का आग्रह करते हो। म सितार के सुरो के साथ अपना सबस प्रिय गीत सुनाती हू जो इसक पहले भी कई अवसरो पर गा चुकी हू। कमरा सगीत क जादुई वातावरण से भीग उठता है। तुम आँखें बन्द किये मत्र मुग्ध स बठे रहते हो।

गाना खत्म होने के बाद भी तुम कई क्षणो तक आँखें नही खोलते मानो अभी तक सगीत की उन लहरियो में डूब उतरा रह हो। और आँखें खोलने के बाद भी तुम कई क्षणो तक कुछ नहा कहते महज मेरी ओर देखते हो। *और जब बोलते हो तो लगता है तुम्हारी आवाज बहुत दूर* से, दिल की अतल गहराइयो स आ रही है तुम्हारे जसी लडकियाँ सचमुच समाज के लिए वरदान होती हैं।

अपने लिए लडकी शब्द का व्यवहार मुझे एक बार चौंकाता जरूर है लेकिन अच्छा भी लगता है।

तुम घडी देखकर उठने का उपक्रम करते हो अच्छा, तो अब

म टोककर कहती हू ऐसी जल्दी क्या है ? जरूरी काम से कही जाना नही हो तो '

तुम कहते हो नहीं म तो इसलिए उठ रहा था कि शायद तुम्हें कोई काम हो और तुम सकोच के कारण न कहो।'

म जल्दी स कहती हूँ, 'नहीं मुझे शाम का कोई काम नहा रहता। कॉलिज से आने के बाद म प्राय खाली ही रहती हूँ।'

इसके बाद तुम साहित्य-चर्चा करते हो। आधुनिक कविता की बारीक खूबिया का विश्लेषण करते हो। आर्ट गैलरी में चल रही अखिल भारतीय-वार्षिक चित्र प्रदर्शनी के सबध में अपने विचार व्यक्त करते हो। आखिर चर्चा हिंदी फिल्मों की निकृष्टता और बँगला तथा अँग्रेजी फ़िल्मों की कहानी सम्बन्धी विशेषताओं पर आ जमती है। तुम्हारी विद्वत्तापूर्ण बातें मेरी निगाहों में तुम्हें और ऊँचा उठा देती हैं।

सड़क पार के सिनमाघर में फिल्म खत्म होने के कारण बाहर निकली हुई भीड़ की आवाजें सुनकर तुम फिर घड़ी की ओर देखते हो और खड़े हो जाते हो। दो कदम मेरी ओर बढ़कर कहते हो 'मर्सी, तुम्हारा बहुत समय ले लिया, देखो न नौ बजने वाले हैं। लेकिन सच तुम्हारे साथ गुज़ारी इस शाम की याद मेरे मन पर छायी रहेगी, भुलाये नहीं भूलेगी। आशा है, हमारी यह मुलाकात आखिरी नहीं होगी हम आगे भी मिलते रहेंगे।'

म खड़ी होकर कहती हूँ, 'म कॉलिज से जल्दी खाली हो जाती हूँ, और शाम को घर में प्राय 'फ्री' रहती हूँ। आप जब भी शाम का फ्री हो, निस्सकोच आ जाया करें। आपकी विद्वत्तापूर्ण बातो से कितना ज्ञान बढ़ता है कितनी नई-नई बातो की जानकारी होती है।'

तुम होठो पर शरारत भरी मुस्कान लाकर कहते हो, 'फिर वही आप!"

म आँचल दाँतो में दबाकर सकोच मे हँस पड़ती हूँ।

*

अब मै रोज़ क्लासेज़ खत्म होते ही घर की ओर दौड़ पड़ती हूँ और तैयार होकर तुम्हारी प्रतीक्षा करती हूँ। मुझे पता है, तुम पाँच बजे कार्यालय से खाली होते हो इसलिए मेरा पाँच बजते ही मेरे कान तुम्हारी टैक्सी की आवाज़ की प्रतीक्षा करने लगते हैं। सुई का काँटा मात्र पाँच पर पहुँचते ही मेरा बेचनी बढ़ने लगता है और मैं परदे की जाली से आँखें लगाकर आतुरता से सड़क की ओर देखने लगती हूँ।

तुम अक्सर शाम को आ जाते हो, और सब्ज़ पार्क के सिनेमाघर का इवनिंग शो खत्म होने पर चले जाते हो।

मुझे लगता है मेरा नवजीवन हो रहा है। अब आईने के सामने बिवस्त्रा खड़ी होती हूँ तो मुझे अपनी देह भरी भरी मालूम देती है। गालों पर मुहासे और फुंसियों की जगह स्वास्थ्य और यौवन की लाली नज़र आती है, आँखों में विशेष प्रकार की चमक दिखाई देती है और स्याह धारियाँ खोजने से भी दृष्टिगोचर नहीं होती। सुबह उठने पर मैं देर तक पलँग पर बैठी गुनगुनाती रहती हूँ बुढ़िया नौकरानी के आकर याद दिलाने पर ही मुझे आभास होता है कि कॉलेज भी जाना है और समय काफी हो चुका है। लेकिन अब तैयार होने में पहले की तरह मुझे घंटे दो घंटे का समय नहीं लगता कुछ ही मिनटों में तैयार होकर कॉलेज चल देती हूँ। शाम को लौटते समय लगता है किसी ने पैरों में पर लगा दिये हैं और मैं उड़ती हुई-सी घर पहुँच जाती हूँ।

तुम मुझसे खुलते जाते हो और साहित्य चर्चा, कला चर्चा और फिल्म चर्चा करते-करते अपने सोफे से उठकर डबल सोफे पर मेरी बगल में आ बैठते हो, मेरा हाथ अपनी हथेलियों में ले लेते हो और मेरे लम्बे नाखूनों से खेलते रहते हो। कभी मेरे माथे पर झूलती लट को सँवारते हो तो कभी गले में लटकते सोने के लॉकेट को होठों के बीच सहेजते हो।

धीरे धीरे साहित्य चचा, कला चचा और फिल्म चर्चा का स्थान गौण होता जाता है और हाथों का खेल प्रमुख। कभी तुम मेरी भौंहों को सहलाते हो तो कभी जूडे के नीचे गदन में अपनी दो अगुलियों से गुदगुदी करते हो।

स्थिति यहाँ तक पहुँचती है कि तुम आते ही हाथ पकड कर डबल सोफे पर मुझे अपने पास बैठा लेते हो और बिना कुछ बोले दाहिना हाथ मेरी गदन के पीछे से लाकर मेरे दाहिने कधे पर रखकर हौले-हौले दबाते हो और बायाँ हाथ ऊपर से ब्लाउज के भीतर सरका देते हो

ऐसा नहीं कि तुम्हारा यह सब करना मुझे बुरा लगता है। सच तो यह है कि तुम्हारे हाथ का स्पश मुझे अलौकिक आनन्द से भर देता है, महसूस होता है कोई मुझे थपकी दकर सुला रहा है, मै खुद को भूलकर अद्ध निद्रा की स्थिति में पहुँच जाती हू। मेरी इच्छा होती है, अपना सिर तुम्हारी छाती में छिपा लू और चिर निद्रा में सो जाऊँ, और कभी न जागूं।

लेकिन पता नहीं, यह नारी जीवन की कसी विडम्बना है कि उसकी देह और प्रकृति मे सदा एक विरोधाभास रहता है, जो बात उसकी देह पसन्द करती है अपने स्वभाव की मजबूरी के कारण वह प्रकट रूप में उसीसे इकार करती है। मैं भी अनिच्छापूवक तुम्हारे हाथ हटा देती हूँ, और तुमसे दूर हट जाती हूँ। कहती हूँ, 'देखो, यह सब ठीक नहीं है।"

तुम रुठने का अभिनय करते हो, क्या ठीक नहीं है? क्या तुम मुझसे प्यार नहीं करती?"

"बात यह नहीं है लेकिन मै सहसा आगे कुछ कह नहीं पाती।

तुम गुस्से से कहते हो, "तो फिर बात क्या है? क्या प्यार महज दार्शनिक होता है? उसमें देह का कोई महत्त्व नहीं होता?"

म विवश हारकर कहती हूँ 'देखो बात यह नहीं है लेकिन मुझ यह सब ठीक नहीं लगता। तुम जब साहित्य चर्चा या कला चर्चा करते हो तो मुझे अधिक अच्छे लगते हो। य सब साधारण लोगों की बातें हैं तुम्हें इन सबसे ऊपर रहना चाहिये।

तुम उसी तरह रूठी हुई आवाज में कहते हो क्या क्या म इसान नहो हूँ? मरी इच्छाएँ नहो हैं?

म आजिजी स कहती हूँ दखो तुम समझन की कोशिश क्यो नहो करते? म आखिर नारी हू। मुझ समाज में रहना है। मरे सामन लम्बा जीवन है जो जो मुझे ज - क त जाना है।

मुझे लगता है वह क्षण आ गया है जब तुम मुझे अपनी बाँहों में भरकर कहोगे क्या जरूर क्या जीना है? म जो तुम्हारे साथ हूँ।

तुम्हारा यह कथन सुनन क लिए मेरे कान आतुरता स प्रतीक्षा करते हैं लेकिन तुम रूठ हुए बिना कुछ बोले चले जाते हो।

जिसे तुम्हारे मुह स सुनने क लिए मरे कान सदियो स आतुर हैं मेरी आत्मा युगों-युगों स प्रतीक्षित है तुम वह बिना कहे चले जात हो लेकिन म जानती हू कि कभी-न-कभी तुम यह अवश्य कहोगे —आज नहो तो कल कल नहो तो परसो कभी-न-कभी वह दिन अवश्य आयगा जब तुम मुझे अपनाओगे क्योकि मने अब तक बहुत आखें देखी हैं उनकी गहराई में छिपे भावो को पढा है तुम्हारी आँखो में छलकता निश्छल स्नेह निश्चित आश्वासन मुझसे छिपा नही है। नहो मरी आखें धोखा नहो खा सकती। वह दिन जरूर आयेगा और म उस दिन की प्रतीक्षा करूगी जन्म जन्मातर तक प्रतीक्षा करूगी मेरे प्रिय!

*

अगले दिन तुम 'इवनिंग शो' की दो टिकटें लेकर आते हो और मुझसे साथ चलने के लिए जिद करते हो। तुम्हारी शिशु-सुलभ ज़िद पर जहाँ मुझे खीज होती है वहीं प्यार भी आता है। मैं हँसकर कहती हूँ 'देखो, साढ़े पाच बज चुके है, अब सिनेमा जाने का समय कहाँ है?'

तुम उसी तरह मुह फुलाये कहते हो, 'तुम पाँच मिनट में तैयार हो जाओ। टैक्सी नीचे खडी है। हम लोग अभी 'लाइट हाउस' पहुँच जाते हैं।'

मैं फिर हँसकर कहती हूँ, 'लेकिन भले आदमी, म पाच मिनट में कैसे तयार हो सकती हूँ? मझे कपडे बदलने हैं और और भी बहुत-कुछ करना है।"

तुम जिद नहीं छोडते मचल कर कहते हो 'वाह, और भी बहुत-कुछ क्या करना है? तुम तैयार हो तो हो।'

मैं मन ही मन कहती हूँ कि तुम्हें कैसे समझाऊँ नारी होते तो समझते। अन्तत म हार मान लेती हूँ, और दोनों हाथ जोडकर कहती हूँ 'अच्छा बाबा, तुम नीचे चलो, म अभी पाँच मिनट में तैयार होकर आती हूँ।"

पुरुष-स्वभाव की कमजोरी के अनुरूप तुम्हारी भी इच्छा यही है कि तुम वहीं खडे-खडे मुझे तयार होते हुए देखो जैसे कि मैं किस तरह साडी खोलती हूँ, ब्लाउज और चोली उतारती हूँ, और अन्त में पेटीकोट खोलकर, किस तरह दूसरा पेटीकोट और चोली और ब्लाउज और साडी पहनती हूँ किस तरह बगल में और गले पर पाउडर लगाती हूँ चहरे का मेकअप करती हूँ, बाल बनाती हूँ। तुम यह सब अपनी आँखो से देखना चाहते हो, एक एक बात अपने सामने घटते हुए देखना चाहते हो, लेकिन यहाँ मेरी जिद के आगे तुम्हें हार माननी पडती है, और तुम बेमन से नीचे चले जाते हो—यह कहते हुए कि म जल्द से-जल्द तैयार होकर नीचे आ जाऊँ।

मैं मन ही मन हँसती हूँ कि आखिर पुरुष हमेशा पुरुष ही है मात्र आदिम पुरुष, उसी आदिम असभ्य पुरुष की तरह वह आज भी नारी को उसके नग्न रूप में देखने के लिए लालायित रहता है फिर चाहे वह पुरुष कितना ही सभ्य और सुसंस्कृत और विद्वान् और बौद्धिक और कला प्रिय क्यों न हो। ये सब चीज़ें भी अपनी जगह ठीक हैं लेकिन जहाँ नारी का प्रश्न आता है पुरुष आज भी मूलत वही आदिम युग का भूखा बर्बर पशु है।

मैं कपड़े बदलते हुए कुछ समय के लिए इन विचारों में खो जाती हूँ। अचानक नीचे टैक्सी के हॉर्न की आवाज़ सुनकर चौंक उठती हूँ, और फुर्ती से तैयार होकर दौड़ती हुई-सी नीचे पहुँचती हूँ। मुझे अपना आदिम पुरुष सूट और टाई में सजा हुआ टैक्सी के पास फुटपाथ पर व्यग्रता से चक्कर काटता दिखाई देता है। मैं प्यार से उसकी ओर देखती हूँ और हौले से मुस्कुरा देती हूँ।

हाल में अँधेरा होते ही तुम मेरा बायाँ हाथ अपने दाहिने पंजे में पकड़ लेते हो। तुम्हारी पकड़ की दृढ़ता देखकर मैं समझ जाती हूँ कि तुम आज कुछ निश्चय करके आये हो, और तुम्हारे पंजे से अपना हाथ छुड़ा लेने का मुझे साहस नहीं होता। तुम मेरा हाथ अपनी गोद में रख लेते हो और दबाते हो मैं हाथ खींचने की कोशिश करती हूँ तो तुम उसे और ज़ोर से दबा लेते हो। मैं थोड़ी देर निश्चल बैठी रहती हूँ फिर सिहर कर एक झटके में अपना हाथ हटा लेती हूँ।

कुछ मिनट बाद तुम अपना दाहिना हाथ मेरी गर्दन के पीछे से दाहिने कंधे पर ले जाते हो और वहाँ से नीचे सरका कर मेरे ब्लाउज़ के भीतर डाल देते हो। जब मुझसे सहन नहीं होता तो मैं ज़बरदस्ती तुम्हारा हाथ हटा देती हूँ।

तुम स्पष्टत बुरा मान चाल हो, मुझस पर हट जाते हो, और अपनी कुर्सी के बायें हत्ये पर कुहनी टिकाकर सामने देखने लगते हो।

कुछ देर बाद मैं तुम्हारी ओर देखती हूँ, तो पाती हूँ कि तुम्हारी आखें बन्द हैं। तुम्हारे प्रति न जाने क्यों एक करुणा म मेरा मन पसीज उठता है। तुम्हारा दाया हाथ अपनी दोनों हथेलियों में लेकर प्यार-मनुहार भरे भाव म दबाती हूँ, और अपनी गोद म रख लेती हूँ। तुम्हारा हाथ मैं हौले-हौले थपकती हूँ—उस तरह जस कि एक मा अपने रूठे हुए बेटे को मनाते और लोरी गाकर सुलाते समय करती है।

कुछ देर तक तुम्हारा हाथ मेरी दोनों हथेलियों के बीच निर्जीव-सा पड़ा रहता है। फिर उसमें हरकत होती है। तुम हथेलियों के बीच से अपना हाथ निकाल लेते हो और मेरी गोद में नीचे की ओर दबाते हो। तुम्हारा यह दबाव धीरे धीरे भारी होता जाता है। मैं प्रतिवाद करती हूँ तुम नहीं मानते तुम्हारा हाथ फिर स हथेलियों में लेना चाहती हूँ, तुम नहीं लेने देते इसस अधिक प्रतिवाद करने का मुझे साहस नहीं होता और म विवश होकर शान्त बैठ जाती हूँ।

अपनी जाँघों के बीच मुझे किनकिनाहट-सी होती है गुदगुदी लगती है, और म असहाय बैठी रहती हूँ। तुम्हारी आखों की आग देखने तक का मुझे साहस नहीं होता भय लगता है कि कहीं वहाँ भी वही दानव धरा हुआ नजर नहीं आ जाय, जिस म आज तक कितने-कितने पुरुषों की निगाहों में देख चुकी हूँ, और जिसस म तुम्हें दूर और ऊपर समझती रही हूँ।

थोड़ी देर में ही मुझे लगता है कि जिस पत्थर म सिहर कर मने तुम्हारी गोद स अपना हाथ हटा लिया था उसी म मेरी अपनी देह भीग उठी है, वह अगम्य किनौने कीड़ा-सा मेरी देह के पोर-पोर पर रेंग रहा है, असम्य धाराओं-उपधाराओं में होकर मेरे ऊपर स प्रवाहित हो रहा है और मैं उसमें डूब रही हूँ खुद को डूबने स बचाने के लिए, मुझे

लगता है, मर मुह स एक भयावनी चीख निकल पडेगी म गल तक आयी चीख को किस तरह रोकने का प्रयत्न करती हूँ लेकिन लगता है ज्वालामुखी को फोड कर उबल पडनेवाले लावे की तरह वह चीख मेरे गले की नसो को फाड कर बाहर निकल आयेगी

मैं एकदम खडी हो जाती हूँ। कहती हूँ 'मुझे घर ले चलो।

मेरे स्वर का कम्पन और आँखो में छलछलाये आँसुओ को देखकर तुम सहम जाते हो और तत्काल उठ खडे होते हो।

सीढिया उतरते समय तुम मुलायमियत स मेरा हाथ दबाते हो, और कहते हो मुझे माफ कर दो।

मैं रुधे गले स कहती हूँ तुम्हें ऐसा नही करना चाहिए था। अगर मेरे गले स चीख निकल जाती तो तो

आगे के शब्द मेरे गले म अटक जाते हैं। लगता है म रो पडूगी। गले तक आयी रुलायी को रोकने के लिए म रेलिंग का सहारा लेकर पल भर सीढिया पर खडी रह जाती हू।

तुम मुझे सहारा देने के लिए अपना हाथ मेरी ओर बढाते हो लेकिन पास से गुजरते लोगो की ओर देखकर हाथ रोक लेते हो और आजिज़ी से कहते हो 'मुझे इस बार माफ कर दो। पता नही, उस समय मेरे भीतर कैसा तो एक दानव समा गया था!'

दानव का नाम सुनकर मेरे होठो पर फीकी मुस्कान आ जाती है। म तुम्हारी आखो की तरफ देखती हू। वहाँ गहरा पश्चाताप है और है वही चिर-परिचित अपनत्व और आश्वासन का शीतल भाव। म आश्वस्त होकर सीढियाँ उतरने लगती हूँ।

तुम टैक्सी में अपने घुटने पर मेरा हाथ रखे उसे स्नेह से हौले-हौले सहलाते हो।

टक्सी रेड रोड की चौडी सडक पार कर विक्टोरिया मदान के बगल से सरपट दौडती है। जब करीब आधा मैदान हमारे बगल से पार हो चुकता है, तो तुम अचानक ड्राइवर से टक्सी रोकने के लिए कहते हो, और खिडकी से बाहर गदन निकालकर कुछ देर मदान की ओर देखते हो, फिर टक्सी का दरवाजा खोलकर नीचे उतर जाते हो। म प्रश्नसूचक दृष्टि से तुम्हारी ओर देखती हूँ। तुम कहते हो, इस समय जी बहुत खराब है। सीधे घर जाने का मन नही है। आओ, थोडी देर यहा पदल चलेंगे।"

तुम टक्सी का किराया चुकाते हो। और कोई चारा न देख म भी नीचे उतर आती हूँ, और तुम्हारे बगल में खडी हो जाती हू।

हम दोनों सडक किनारे बिजली के खभा के नीचे एकाकी खडे है और हमारे बगल से कारें आ-जा रही हैं। हमारे सामने धुध में लिपटा घास का एक लम्बा चौडा विशाल मदान पसरा पडा है जिसके उस पार भी कारा की लम्बी कतारा की छोटी बत्तियाँ रेंगती-सी दिखाइ दे रही हैं।

तुम मेरा हाथ पकडे धुध में लिपटे उस घास के मैदान पर उतर पडते हो। घास की मुलायम पत्तियाँ पैरा के नीचे दबने से एक अश्रव्य-सी मधुर आवाज होती है जो बेहद भली लगती है।

हम कुछ देर खामोश चलते हैं। कोहरे से कुछ-कुछ सीली हुई दूब की मुलायम पत्तियाँ मेरी चप्पल के किनारा से ऊपर उठकर तलवा का स्पश करती हैं। उनका शीतल स्पर्श मेरे अन्तस की समस्त जलन दूर कर देता है।

सहसा तुम कहते हो तुम्हें पता है इस मकान में कई वारदातें हो चुकी हैं ?

म तुम्हारा आशय नहीं समझ पाती। पूछती हू यानी ?

यानी कि कलकत्ता नगरी के ठीक सीने में बसा हुआ यह खूबसूरत धाम का मकान रात के समय बहुत बदनाम समझा जाता है। यहाँ आय दिन व्यभिचार और बलात्कार और राहजनी और यहाँ तक कि कत्ल आदि की भी वारदातें होती रहती हैं। रात के अधेरे में इस मकान में जाना काफी खतरनाक समझा जाता है।

म मन ही मन सिहर उठती हू लेकिन कुछ कहती नहीं।

तुम सीधे मेरी ओर देखकर पूछते हो क्या तुम्हें डर नहीं लगता ?

म तुम्हारे निकट खिसक आती हू और सट कर चलते हुए कहती हूँ 'तुम्हारे साथ रहने पर भला मुझे किस बात का डर ?

तुम सहसा चलते चलते रुक जाते हो और पूछते हो सच इतना विश्वास है तुम्हें मेरे ऊपर ?

हाँ। म सक्षिप्त उत्तर देती हू।

तुम मेरे कधे पकड लेते हो और झुककर मेरी आँखो में देखते हो देखते हो और देखते रहते हो। मुझे लगता है कुछ ही क्षणो में कई कल्प बीत जाते हैं। तुम उसी तरह मेरी आखो में देखते हुए कहते हो सच मैं तुम्हें बहुत चाहता हूँ बेहद चाहता हू अपने मन और प्राण और आत्मा की समस्त शक्ति से चाहता हूँ।

मुझे लगता है आखिर वह क्षण आ गया है वह क्षण जिसकी म सदियो से प्रतीक्षा करती आ रही हूँ वह क्षण जब तुम कहोगे कि ।

लेकिन तुम वह नही कहते। तुम कुछ भी नही कहते। सिर्फ मेरे कधे छोड देते हो, और कमर के गिर्द बाह लपेट कर चलने लगते हो।

हम मैदान के बहुत-कुछ बीच में हैं। जिधर से हम आये हैं उस रेड रोड के दोनो किनारे दूधिया बिजली की बत्तियां के खभे दूर तक एक कतार में खडे दिखाई दे रहे हैं और बीच में इक्की-दुक्की कारो की धीमी बत्तियाँ रेंगती-सी सरक रही हैं। जिस ओर हम जा रहे हैं उधर चौरंगी की व्यस्त सडक है जिस पर रेंगती कारो की बत्तियाँ दूर तक सीधी कतार में जाती दिखाई देती हैं और पहले की अपेक्षा अब काफी निकट मालूम देती हैं। हमारी बायी ओर काफी दूर धर्मतल्ले की ऊँची इमारतो पर जलती हुई रग बिरगी नियोन लाइटस जगमगा रही हैं जिनमें 'ब्रुक बाण्ड' चाय और 'कैप्स्टन' सिगरेट के बडे-बडे लाल अक्षर इतनी दूर से भी साफ पढे जा सकते हैं। हमारी दायी ओर विक्टोरिया मेमोरियल की सफेद सगमरमरी इमारत है जो धुध में लिपटी होने के कारण इतनी नजदीक होते हुए भी साफ दिखाई नही देती, महज उसके धुधले-से आकार का आभास होता है। उस धुधले आकार के ऊपर आस्मान की काली गहराइयो में फीके-से चाँद का आधा कटा टुकडा तैर रहा है।

मैं चाँद की ओर देखकर विभोर आवाज में कहती हूँ, 'देखो, देखो, कितना प्यारा चाँद है!'

तुम एक बार चाँद की ओर देखते हो फिर चाँद के नीचे धुध में लिपटी महारानी विक्टोरिया की सफेद सगमरमरी इमारत की ओर। फिर जैसे अपने से ही कहते हो दिन के समय इस सगमरमरी इमारत के गोल गुम्बज पर एक काली परी पख लगाये आस्मान की ओर देखती दिखाई देती है। मैं जब भी उसे देखता हूँ मुझे महसूस होता है किसी ऋषि के शाप से कोई देव-कन्या स्वर्ग से च्युत होकर मर्त्यलोक पर उतर आयी है, और पत्थर की काली मूर्ति में परिवर्तित होकर सदियो से इसी तरह इस इमारत के गुम्बज पर खडी-खडी स्वर्गलोक के अपने घर की ओर

ताक रही है जहाँ उसका देवता उसकी प्रतीक्षा में आँखें बिछाये बैठा है। इस समय गुम्बज के ऊपर वह पत्थर की देव-कन्या दिखाई नहीं दे रही है, लगता है मर्त्यलोक पर छायी इस धुंध का लाभ उठाकर वह देव-कन्या ऋषि की आँखों में धूल झोंक कर अपने पंख फैलाये आसमान की काली गहराइयों में तर गयी है, और इस समय अपने देवता की गोद में सिर रखे सुख से सो रही है।

तुम क्षण भर रुककर फिर कहते हो लेकिन हमारे ऊपर तो किसी ऋषि का शाप नहीं है फिर हम लोग एक-दूसरे से क्यों नहीं मिल पाते ? इतने नज़दीक होते हुए भी इतने दूर क्यों रहते हैं ? हमारे बीच से यह दीवार क्यों नहीं हट जाती और क्यों नहीं हम मिलकर एक हो पाते ?

तुम्हारी बाँह का घेरा मेरी कमर के गिर्द अधिक कस जाता है। इस ठंड में भी तुम्हारी देह की गर्मी मुझे अपने शरीर में महसूस होती है। मैं अपना सिर तुम्हारे चौड़े सीने में छिपा लेती हूँ। तुम दोनों बाँहों में मुझे कस कर भींच लेते हो। तुम्हारे सीने के भीतर धड़कते दिल की आवाज़ मुझे साफ सुनाई देती है। लगता है यह आवाज़ अपनी हर धड़कन के साथ मेरे कानों में कह रही है तुम मेरी हो तुम मेरी हो तुम मेरी हो !"

मुझे लगता है यही शब्द कहने के लिए तुम्हारे होंठ भी फड़क रहे हैं लगता है बस अभी ये शब्द तुम्हारे होंठों से निकल कर मेरे कानों में अमृत-वर्षा कर देंगे और मैं पागल होकर इस कोहरे के सागर में झूम झूम कर नाच उठूँगी

कि सहसा हम छिटक कर एक-दूसरे से अलग हो जाते हैं। हमें लगता है, कोहरे की परतों के पार कहीं पास से ही घास पर किसी के चलने की आवाज़ आ रही है। हम आँखें गड़ाकर देखते हैं लेकिन सिवाय धुंध की अभेद्य दीवार के कुछ दिखाई नहीं देता। आवाज़ निकट आती

मालूम देती है। लगता है, दो भारी बूट घास को रौंदते हुए हमारी ओर बढ़े आ रहे हैं।

मैं भय से कांप कर तुमसे चिपट जाती हूँ। तुम आश्वासन देने के भाव से मेरी पीठ थपकते हो, मजबूती से मेरी कलाई पकड़ लेते हो, और कोहरे के उस सागर में मुझे घसीटते-से दौड़ने लगते हो। हमें अपने पीछे बूटों के दौड़ने की आवाज सुनाई देती है। लेकिन हम पलट कर नहीं देखते, और बेतहाशा उस कोहरे की दीवार को चीरते चले जाते हैं।

कुछ ही क्षणों में हम मैदान के इस पार बिजली के खंभे के नीचे पहुँच जाते हैं। मेरी साँस धौंकनी की तरह चल रही है। मैं रुककर सुस्ताना चाहती हूँ लेकिन तुम मेरा हाथ पकड़े तेज-तेज कदमों से चौरंगी की चौड़ी सड़क पार करते हो, और एक खाली टैक्सी को रुकने का इशारा करते हो। हम फुर्ती से टैक्सी में चढ़ जाते हैं।

मेरे फ्लैट के सामने जब टैक्सी रुकती है तो मैं पूर्णतः स्वस्थ हो चुकी होती हूँ। तुम स्नेह से मेरा हाथ दबाते हो, और हौले से मेरा गाल थपथपाते हो। मैं टैक्सी से नीचे उतर जाती हूँ।

टैक्सी चलने लगती है तो तुम खिड़की से बाहर सिर निकाल कर आश्वासन भरी मुस्कान से मेरी ओर देखते हो, और अपना दायां हाथ हिलाकर विदा लेते हो। मैं अपने हाथ का रूमाल हिलाकर तुम्हें विदा देती हूँ। जब तक टैक्सी आँखों से ओझल नहीं हो जाती, मैं रूमाल हिलाती रहती हूँ। फिर होठों के भीतर ही भीतर बुदबुदाती हूँ

'विदा, मेरे दृश्य गोचर पुरुष, विदा!
विदा, मेरे अजन्मे शिशु के भावी जनक, विदा!!'

*



पुरुष

अपनी बाइ ओर बठी साथिन स बात करने क लिए तुम अपना चहरा उस ओर घुमाती हो और क्षण के उस एक अंश में मेरी नजर स तुम्हारी नजर मिलती है तुम अविलम्ब अपनी दृष्टि हटा लेती हो।

लेकिन क्षण के उस एक अंश में ही म तुम्हारी दृष्टि में जो कुछ पाता हूँ वह मुझे पोर-पोर तक दहला देता है—गहरी उपेक्षा और तीखी हिकारत।

इसके बाद पूरी गाड़ी के दौरान तुम एक बार भी मेरी ओर नहीं देखती उस उपेक्षा और हिकारत भरी दृष्टि स भी दुबारा मेरा ओर देखना तुम जरूरी नहीं समझती।

इसके बाद मुझे भी पता नहा गाड़ी में और क्या-क्या होना है। तुम्हारी दृष्टि की उपेक्षा और हिकारत की लपट में झुलसता हुआ म उसी उधेड-बुन में उलझा रह जाता हू कि क्या मैंने सचमुच उस दिन भूल की ? जो म कहना चाहता था और जो तुम सुनना चाहती थी और जिसके लिए शायद हम दोनो ही महीनो स प्रतीक्षा करते आ रहे थे और जिसका उस दिन हमें पूर्ण सुयोग भी मिला था क्या सचमुच उस उस दिन न कहकर मने भूल की।

लेकिन अब भी उस दिन की बात सोचता हू तो समझ में नहीं आता कि जो कुछ मने किया उसके अलावा कुछ और कर भी कसे सकता था ? उस दिन का एक एक क्षण आज भी मेरे सामने इस तरह स्पष्ट है गोया अभी घट रहा हो

*
*
*

*
*
*

तुम अपने घर के दरवाज़े पर खड़ी हो। टैक्सी रुकते ही मैं बाहर निकलता हूँ और तुम्हारी ओर देखकर अपराधी की तरह मुस्कुराता हूँ। तुम भी कहती कुछ नहीं, महज हौले से हँस देती हो। मैं टैक्सी का खुला फाटक पकड़ कर एक ओर हट जाता हूँ ताकि तुम पहले बैठ सको। अपने हाथ के शान्ति निकेतनी बैग को झुलाती हुई तुम सहज मन्थर चाल से टैक्सी तक आती हो, और सामने बैठे ड्राइवर पर एक उड़ती-सी दृष्टि डालकर पीछे की सीट पर बैठ जाती हो।

एक धचके से टैक्सी चलती है, तो मैं भर नज़र तुम्हें देखता हूँ। तुम कितनी ताज़ा और प्रसन्न हो! तुम्हारी काँजीवरम की साड़ी और उसी डिज़ाइन के ब्लाउज़ से सेन्ट की तेज़ लपट, चेहरे पर हाल ही में किये मेक-अप से क्रीम, पाउडर और रूज़ की मिली-जुली महक, जूड़े में लगी हुई फूलों की वेणी से चमेली की मीठी मीठी खुशबू, और सद्य-स्नाता युवा देह से एक विशेष किस्म की अनाम गंध निसृत हो रही है। अभी-अभी खिली कलिका की सम्पूर्ण ताज़गी, स्वच्छता और खुशबू तुम्हारी हर चीज़ में बसी हुई है। इतनी देर दरवाज़े पर धूप में खड़े रहने के कारण तुम्हारे ऊपरी होंठ के बहुत मसृण और भूरे बालों पर दो चार बुँदिया-सी झलक आयी है। तुम अपने शान्ति निकेतनी बैग से ब्लाउज़ के कपड़े की डिज़ाइन का रूमाल निकालती हो और उन बुँदियों को बहुत हल्के हाथ से पुचकारने की-सी अदा से पोंछती हो, फिर बैग से एक छोटा आईना निकाल कर होंठों पर पाउडर का एक पफ देती हो, तब सब चीज़ें वापस बैग में रख लेती हो और मेरी ओर देखकर हौले से मुस्कुराती हो। तुम्हारे व्यक्तित्व में एक सुरुचि और विशेष प्रकार का आकर्षण सदा रहा है जो इस समय अपने चरम पर है।

एक हलके झटके से टकसी रुकती है। एम्पायर के चौराहे पर लाल बत्ती चमक रही है और हमारे आगे-पीछे तथा दाइं-बाएँ कारों बसों और टैक्सियों की लम्बी कतारें हैं। दाइं ओर की एक कार में अगली-सीट पर एक विदेशी-युगल बैठा है। युवक का दाहिना हाथ स्टीयरिंग व्हील पर है और बायाँ हाथ अपनी साथिन की कमर पर। युवती का सिर युवक के कंधे पर है और पूर्ण तृप्ति एवं सुख की भावना से उसने आँखें बन्द कर रखी हैं। युवक झुककर कभी उसकी बन्द पलकों कभी माथे और कभी लिपस्टिक लगे होठों को चूम लेता है। दोनों को इसकी तनिक भी परवाह नहीं है कि आस-पास और आगे-पीछे की कारों वाले उन्हीं की ओर देख रहे हैं और शायद उन्हीं की बातें भी कर रहे हैं। मैं तुम्हारा ध्यान उनकी ओर दिलाता हूँ। तुम कुछ देर उदासीन भाव से उधर देखती हो। विदेशी-युगल का ध्यान भी हमारी ओर आकर्षित होता है। वे दोनों अपने बाएँ हाथ हिलाकर हमें विश करते हैं और बत्ती के लाल की जगह हरी होते ही उनकी कार तेज़ी से आगे निकल जाती है।

मैं तुम्हारी ओर देखकर प्यार से हँसता हूँ। कहता हूँ कि दरअसल जीना तो ये लोग जानते हैं। मुक्त भाव से जीवन और देह की नियामतों का उपभोग करते हैं। मैं एक बार फिर तुम्हारे नज़दीक खिसकने का प्रयत्न करता हूँ, बीच के बैग को उठाकर अपनी गोद में रखता हूँ। तुम्हारा दाहिना हाथ अपनी दोनों हथेलियों में ले लेता हूँ और फिल्मी प्रेमियों के से अन्दाज़ में तुम्हारी आँखों में झाँककर वहाँ अपनी तस्वीर देखने की कोशिश करता हूँ। स्पष्ट ही मैं इस समय भावुक हो उठा हूँ। मेरी साँस कुछ जल्दी चलने लगी है। हाथ हौले-हौले काँपने लगे हैं। शिराओं का रक्त गरम हो उठा है और आवाज़ में भावावेश के समय की थरथराहट उभर आयी है। इसी आवेश में पता नहीं कैसे कब मेरे बाएँ पैर का जूता तुम्हारी काजीवरम् साड़ी के नीचे झूलते छोर से छू जाता है। तुम्हारे ऊपर इस सब की प्रतिक्रिया विशेष अच्छी नहीं होगी। ठंडी हँसी हँस

कर तुम अपना हाथ छुड़ा लेती हो, बैग वापस बीच में रख लेती हो, और वही औपचारिक मुस्कान होठों पर लाकर कहती हो

तुम फिर भटकने लगे न ! सीधे बैठो !!"

मुझे लगता है उफनते दूध पर किसी ने ठंडे जल का छींटा मार दिया हो। मेरे तने हुए अंग ढीले हो जाते हैं और मैं तत्क्षण अपनी स्वाभाविक दशा में लौट आता हूँ। तुम साड़ी के निचले छोर पर मेरे जूते से लगी हुई मिट्टी को झुककर रूमाल से झाड़ती हो, फिर कहती हो

'इन विदेशियों और विदेशी सभ्यता ने हमारे समाज को नष्ट कर दिया है। इनके सेक्स सम्बंधी उद्धत व्यवहार ने हमारे नासमझ युवक-युवतियों को पथभ्रष्ट कर डाला है।

तुम एक बुजुर्ग औरत के अन्दाज़ में बोल रही हो, हालांकि तुमने स्वयं अभी पूरे तीस बसन्त भी नहीं देखे हैं। अपने कथन की पुष्टि के लिए तुम कॉलेज की छात्राओं के किस्से सुनाने लगती हो

'जब ये लड़कियाँ हाईस्कूल से पहली बार कॉलेज आती हैं तो कितनी सीधी और भोली होती हैं—जैसे कुछ जानती ही न हों और पढ़ने के सिवाय जीवन का और कोई लक्ष्य ही न हो, लेकिन कुछ दिन बीतते न बीतते इन्हें कॉलेज की हवा लगनी शुरू हो जाती है और ये फिल्म-तारिकाओं को भी मात करने लगती हैं।'

तुम फिर बैग में से आईना निकालकर चेहरे का मेकअप देखती हो, और होठों पर लिपस्टिक की एक ताज़ा परत चढ़ाती हो।

"अभी उस दिन की बात है। मैं एक तल्ले पर स्टाफ रूम के सामने खड़ी नीचे बैडमिंटन खेलती लड़कियों को देख रही थी। उनमें एक लड़की सलवार कुरते में थी। जब कभी 'कॉक' को जमीन से उठाने के लिए वह

नीचे झुकती, उमर लो बट कुरते में से दाना बग साफ दिखाई दे जाते। मुझे बेहद बुरा लगा और वितृष्णा हुई। मन यही म पुकार कर कहा कि खेल खत्म होने के बाद मुझसे स्टाफ रूम में मिल। जब वह आयी तो मन उसे बहुत भिड़का कि कुल तीन महीने पहले कॉलिज में भर्ती होते समय वह कितनी सीधी थी और अब उसके क्या रंग-ढंग हैं। स्टाफ रूम से बाहर अन्य बहुत-सी लड़कियाँ गर्दनें बढ़ा-बढ़ाकर दरवाज़े के भीतर झाँक रही थीं, और मुह में दुपट्टा या साड़ी का पल्ला ठूँस हँस रही था। वह लड़की जब तक भीतर रही नीची गर्दन किये चुपचाप मेरा प्रवचन सुनती रही, लेकिन स्टाफ रूम से बाहर निकलते ही अन्य लड़कियों के साथ मिलकर बेगाम की तरह हँसती हुई भाग गयी। क्रोध के मारे मेरा खून उबल उठा लेकिन उपाय ही क्या था।

टक्सी के फाटक का काँच नीचे गिरा हुआ है और धूप तुम्हारे सुडौल गले से होती हुई ठोडी होठ और नासिका छिद्रा पर पड रही है। तुम्हारे गले की सलवटो और होठो पर पसीने की हल्की नमी आ गयी है। तुम रूमाल से उसे पोछती हो और काँच ऊँचा उठा लेती हो।

टक्सी हवड़ा पुल से गुजर रही है। पुल के दाएँ-बाएँ नदी के दोनो किनारो पर छोटी-बड़ी नाव और छोटे छोटे स्टीमर खडे है। कुछ नावें और स्टीमर पुल के नीचे से आ-जा रहे है। पुल की ओर आते एक स्टीमर की रेलिंग के सहारे धोती कुरते म एक युवक और चौडे पाड की साडी में एक युवती खडी है। युवक का हाथ रेलिंग पर रखे हुए युवती के हाथ पर है। दोनो रह रहकर प्यार भरी नजर से एक-दूसरे की ओर देखते है दबे-दबे हँसते हैं और फिर नीचे झुककर जल में कुछ देखने लगते है। युवती की माँग में गहरे लाल सिन्दूर की मोटी लकीर चमक रही है। उनकी आखो के सलज्ज भाव और दबी-दबी हँसी से लगता है कि वे नव विवाहित हैं और इस समय स्टीमर पर पूरे

परिवार के साथ हैं कारण व रह रहकर छिपी नजरो से पीछे की ओर भी देखते जाते हैं।

नव-परिणीता दम्पति के सम्पूर्ण हाव भाव म एक ऐसा मोहक आकर्षण है, एक ऐसा घरेलूपन है, अपनापन है कि मुझे लगता है उस अनकहे को तुमसे कहने का यही उपयुक्ततम क्षण है। मैं तुम्हारा ध्यान उस युवा दम्पति की ओर दिलाता हूँ और कुछ कहने के पूर्व, प्रतिक्रिया जानने के लिए गौर स तुम्हारे चेहरे की ओर देखता हूँ। तुम एक उडती-सी नजर उस दम्पति की ओर डालती हो, फिर पूर्ववत अपनी बात म लग जाती हो।

तुम इस समय अपने कॉलेज की अध्यापिकाओ की चर्चा कर रही हो, और नारी-सुलभ ईर्ष्या तथा द्वेष का यथेष्ट परिचय दे रही हो। तुम बताती हो कि किस तरह तुम्हारी एक साथिन को दिन भर बनाव शृगार से ही फुरसत नही मिलती, तो दूसरी को बॉय फ्रेण्डस स मिलने-जुलने और फोन करने तथा शेष समय में उन्हा की चर्चा करते रहने का राग है। तुम क्षण भर रुकती हो, और एक अर्थपूर्ण मुस्कान से मेरी ओर देखकर अपनी तीसरी साथिन की बात बताती हो कि कुल एक महीने पूर्व उसकी शादी हुई, अभी-अभी वह कश्मीर से हनीमून मनाकर लौटी है और अब किस तरह माँग में ढेर-सा सिन्दूर थोप कॉलेज में चहकती फिरती है और मारे जोश के तीन-तीन चार चार सीढियाँ एक ही फ्लाँग में चढ जाती है और स्टाफ रूम में हर सास क साथ पाँच बार अपने 'उनको' और हनीमून की चर्चा करती है।

अपनी साथिना की चर्चा करने में तुम्हें इतना रस आ रहा है कि स्वय को थोडी देर क लिए एकदम भूल जाती हो—भूल जाती हो कि तुम्हारे गले की सलवटा पर जूडे के नीचे गर्दन पर और होठो क बालो पर फिर स पसीना झलक आया है स्लीवलेस ब्लाउज के दोनो कानें बगलो में भीज उठे हैं और अब लिपस्टिक तथा चेहरे क मेकअप पर भी क्रमश धूप का असर होने लगा है।

अचानक हवडा की तग गन्द पर टक्सी रकती है और ड्राइवर बताता है कि इजन गरम हो गया है और उस टक्सी में ठडा पानी भरना होगा जिसमें पाँच-सात मिनट का समय लग सकता है। तुम्हें तत्काल अपनी देह और मेकअप का ध्यान आता है। तुम गन्न, गल हाठ भौंहा और बगला का पसीना पाछनी हा, फिर बग स आईना पाउडर आदि निकालकर मकअप सँवारने में लग जाती हो।

बस्ती की यह सडक तग है और दोना आर छोटी छोटी दूकानें हैं। टक्सी को सहसा रुकते देखकर कुतूहलवश आस-पास भीड लग जाता है। कुछ झाँककर भीतर शृगार करती नारी को भी देखने में नहा हिचकते लेकिन तुम निश्चिन्त होकर अपने साज-सँवार में मग्न रहती हा। मुझे न जाने यह सब कसा कसा लगता है। मैं उतरकर सडक क उस पार की दूकान पर चला जाता हूँ, और उस समय तक वही खडा सिगरेट पीता रहता हूँ जब तक कि ड्राइवर सीट पर नहा बठ जाता।

मरे टक्सी में आकर बठते ही तुम हवडा की इस तग और गन्दी बस्ती सडक के दोना ओर सडती नालिया छाटी छोटी धूल भरी दूकाना और बदतमीज़ लोगा की शिकायत शुरू कर देती हो यहाँ तक कि सूरज की तेज़ धूप को भी नही छाडती।

म होठा पर वही औपचारिक मुस्कान ले आता हूँ जो अब तक तुम्हारे होठा की सगिनी रही है। लेकिन तुम इस परिवतन पर ध्यान नहा देती, और पुन कालेज की साथिना की चर्चा शुरू कर देती हो और निस्सकोच होकर एक-एक का भण्डा फोडने लगती हो। बीच बीच में हवडा और शिवपुर की तग और गदी बस्तियो की धूल और धूप पर भी नाक भौं सिकोडती रहती हो।

आखिर बोटनिकल गाडन के विशाल लौह-कपाट के सामने टक्सी रुकती है तो तुम चेहरे और गले और गदन से धूल और पसीना पाछती हुई टक्सी

से बाहर निकलती हो, और लगभग एक छोटी बच्ची की तरह उमग में भरकर गेट की ओर दौड पडती हो।

मैं टक्सी का किराया देकर गार्डन के भीतर आता हूँ तो तुम्हें ताल के किनारे मंत्रमुग्ध-सी खडी पाता हूँ। तुम हुलस कर मेरा हाथ पकड लेती हो, और ताल की ओर इशारा करके कहती हो

'देखो, देखो कितने बडे-बडे पत्ते हैं! कितने हरे, चिकने और गोल! बहुत बडे थाल की तरह गोल-गोल! समूचा ताल इन कमल-पत्तो से भरा हुआ है। अच्छा अगर मैं उस पत्ते पर पाल्थी मार कर बैठ जाऊँ, तो '

तुम एक मासूम बच्ची की तरह मचलकर कहती हो। इस बात की तुम्हें अब बिल्कुल चिंता नहीं है कि रास्ते की धूल और धूप ने तुम्हारा मेकअप नष्ट कर दिया है। मोद में भरी हुई, मुझे लगभग खीचती-सी, तुम डामर की उस दर्पण-सी स्वच्छ सडक पर बढ चलती हो जिसके दोनों ओर ताड के लम्बे-लम्बे पेड हैं। दूर तक एक ही कतार में खडे लगभग समान आकार के ये पेड कितने सुंदर दिखते हैं लेकिन इनके साये जडों के पास भयभीत-से सिमटे हुए हैं और पूरी सडक सूरज की तेज धूप में काँच की तरह चमक रही है। कहीं-कहीं तो कामी खून-सा गाढा डामर भी झलक आया है।

हम दोनों की परस्पर गुथी हुई हथेलियाँ पसीने से पसीज उठती हैं तो मैं अपना हाथ छुडाकर रूमाल से हथेली का पसीना पोछता हूँ। तुम अपनी हथेली को साडी से रगडकर पोछ लेती हो। हमारी दृष्टियाँ छायादार जगह की तलाश में भटक रही हैं लेकिन सब कुछ तेज धूप में झुलस रहा है। तुम्हारा प्रारंभिक उत्साह मंद पडने लगा है, और हम दोनों के मन में इस समय एक ही बात चक्कर काट रही है कि कहीं कोई शीतल छायादार जगह होती, जहाँ बैठकर हम पसीना सुखा सकते।

सड़क से दूर हमें एक छोटा बोल्डर दिखाई देता है जिसके किनारे एक ऊँचा छायादार पेड़ खड़ा है। राहत की साँस ले हम पत्थर की ओर बढ़ते हैं और वहाँ घास, सूखे पत्तों और तिनकों के ऊपर बने धूप-छाया के बेल-बूटों पर रूमाल बिछाकर बैठ जाते हैं।

बैठते ही तुम अपने नीचे से रूमाल निकाल लेती हो क्योंकि पसीना पोंछने के लिए तुम्हें उसकी ज़रूरत महसूस होती है। तुम खूब रगड़-रगड़ कर चेहरे, गर्दन, गले और बगलों का पसीना पोंछती हो।

तुम्हारा रूमाल पसीने से भीग उठता है लेकिन तुम्हें फिर भी संतोष नहीं होता। तुम अपनी साड़ी के पल्लू से रही-सही कसर पूरी करती हो फिर रूमाल को निचोड़कर सूखने को फैला देती हो। सैंडिलों का फीता ढीला कर उन्हें खोल देती हो, पैर फैलाकर आराम से बैठ जाती हो, एक तिनका उठाकर दाँतों से कुतरने लगती हो और मेरी ओर देखती हुई महादेवी का एक गीत गुनगुनाती हो।

पास से किसी चिड़िया के बोलने की मीठी आवाज़ आती है, तो तुम गर्दन ऊँची करके इधर उधर देखती हो लेकिन चिड़िया दिखाई नहीं देती हालाँकि आवाज़ बराबर आती रहती है। अब तुम चिड़िया की आवाज़ में सुर मिलाकर गुनगुनाती हो।

सड़क के छोर पर छात्र जैसे तीन युवक दिखाई देते हैं। वे एकटक तुम्हारी ओर देखते हुए आ रहे हैं। निकट आने पर उनकी सीटी और अकारण ज़ोर-ज़ोर से हँसने की आवाज़ें सुनाई देती हैं। बगल से गुज़रकर जब तक वे आँखों से ओझल नहीं हो जाते, बराबर पलट पलट कर तुम्हारी ओर देखते रहते हैं।

उनकी इस बदतमीज़ी की ओर मैं तुम्हारा ध्यान दिलाता हूँ तो तुम सहज हँस देती हो—ऐसी हँसी जिसमें संतोष और विजय का मिला-जुला भाव

निहित होता है। तुम अर्थपूर्ण दृष्टि से मेरी ओर देखती हो, और इस बार कोई फिल्मी धुन गुनगुनाने लगती हो। तुम्हारी दृष्टि में प्रतीक्षा है यह प्रतीक्षा कि मैं तुमसे गाना सुनाने के लिए कहूँ, लेकिन मैं ऐसा कुछ नहीं कहता, तो क्रमशः तुम्हारी आंखों का भाव बदलने लगता है, उनमें अपमान-जनित क्षोभ उभर आता है लेकिन मैं तब भी चुप रहता हूं। इसलिए कि मैं इस समय तुम्हारे चेहरे को गौर से देख रहा हूँ जहां कुछ हिस्सों का रंग तो अभी तक भी क्रीम और पाउडर की तहों के कारण सफेद है, लेकिन शेष हिस्सों का मेकअप उतर जाने के कारण भीतर की असली मटमैली-सी खाल निकल आयी है, गालों पर लगा हुआ रूज़ गायब हो चुका है और नीचे से मुहासे और फुंसियां बड़े आकार में उभर आयी हैं। यही हाल होठों की लिपस्टिक का है जिसका रंग गहरे लाल की जगह कहीं गुलाबी, कहीं काला और कहीं-कहीं सफेद हो आया है। कुल मिलाकर तुम्हारे चेहरे का रूप इस समय कुछ ऐसा अजीबोगरीब है कि मैं उधर से दृष्टि हटा नहीं पाता। या एकटक तुम्हारी ओर देखने को शायद तुम गलत अर्थ लगा लेती हो। क्षोभ की जगह तुम्हारी आंखों में फिर उम्मीदें झलक आती हैं। तुम लजाने का अभिनय करती हुई दृष्टि परे हटा लेती हो चेहरा आँचल से ढक लेती हो और एक लजीली नव विवाहिता वधू के से अन्दाज़ में कहती हो

'ऐसे क्या देख रहे हो हमारी ओर ?

मुझसे और सहन नहीं होता। गले में कुछ अटक-सा जाता है और वितृष्णा से मुंह का स्वाद खट्टा-खट्टा हो उठता है। मैं एकदम उठ खड़ा होता हूँ, कहता हूँ

"यहाँ मच्छर बहुत काटते हैं और प्यास भी लग आयी है। चलो, शायद कहीं पानी मिल जाये।

तुम फिल्म-तारिका की तरह मचल कर कहती हो

"हमसे उठा नहीं जाता। हमारा पर मर गया है। लो, हमें सहारा दो।'

तुम एक हाथ मेरी ओर बढा रही हो और मुझे लगता है, अचानक तुम्हारा शरीर बहुत भारी हो उठा है मेरे उठाए उठेगा नही। प्रयत्न के बावजूद मेरे हाथ की पकड में तुम्हारा हाथ छूट जाता है और तुम आधी उठी हुई वापस बैठ जाने को मजबूर हो जाती हो या कहूँ गिर-सी पड़ती हो। तुम्हारे मुह से एकदम निकलता है

'जानवर!

मुझे अपने कृत्य पर ग्लानि महसूस होती है। मै तुमसे क्षमा माँगता हूँ। लेकिन तुम्हारा गुस्सा शान्त नही होता। तुम खडी होकर मुह फुलाए चलने लगती हो।

हम चुपचाप चलते हैं। मेरी निगाहें पानी तलाशती हैं लेकिन सिवाय काई जमे हुए पोखरो के और कही पानी का चिह्न नजर नही आता। सब कुछ जैसे तेज़ धूप में झुलस रहा हो। सडक के दोनो ओर की हेज फूल, क्यारियाँ, यहाँ तक कि घास और पेडो के पत्ते तक जैसे प्यास से व्याकुल हो।

मुझे याद आता है इस बोटनिकल गार्डन्स में एक बडा भारी बरगद का पेड था जिसके नजदीक दो-तीन होटल थे। पूछने पर पता चलता है कि कुछ दूर आगे जाकर बाएँ मुडते ही वह बरगद का पेड है।

और जब बरगद का पेड दिखाई देता है तुम्हें खुश करने के इरादे से मै कहता हूँ

'तुम्हें मालूम है यह पेड कितने सौ वर्ष पुराना है? देखने में तो यो लगता है गोया यह एक पेड नही वरन सौ से भी अधिक पेडो का झुण्ड हो, बता सकती हो इनमें मूल पेड कौन-सा है? कहते हैं मूल

पेड़ की जो जटाएँ निकली उन्होंने नीचे झुक-झुककर ज़मीन में अपनी जड़ें फैला लीं, और अब यह बताना भी मुश्किल है कि मूल पेड़ कौन-सा है, बल्कि लोगों का तो यह विश्वास है कि मूल पेड़ कभी का नष्ट हो चुका है, और अब यह जो कुछ बचा है वह उसी का एक पूरा परिवार है।"

तुम कुछ जवाब नहीं देती। पेड़ों के झुण्ड के भीतर से चलती हुई एक तने के पास रुकती हो जिसके चारों ओर गोल चबूतरा बना हुआ है। रूमाल से चबूतरे की मिट्टी और गर्द झाड़ती हो फिर बैठते हुए कहती हो

"तुम पानी पी आओ, मैं यहीं बैठी हूँ।

पानी अभी तक तुम्हारा गुस्सा शान्त नहीं हुआ है। मैं कुछ कहूँ इसके पहले तुम चबूतरे से वापस खड़ी हो जाती हो और कहती हो

"यह चबूतरा तो जल रहा है। मैं यहीं खड़ी हूँ। तुम्हें प्यास लगी है, जाओ, पानी पी आओ।'

मैं आजिज़ी से कहता हूँ

'देखो, मैं तुमसे क्षमा माँग चुका हूँ। सच कहता हूँ मैंने जान-बूझ कर तुम्हारा हाथ नहीं छोड़ा था। पता नहीं, उस समय मुझे क्या हो गया था? एकदम अनजान में ही हाथ छूट गया। लो, मैं कान पकड़ता हूँ, अब तो एक बार हँस दो।"

तुम्हारे लाल और गुलाबी और सफ़ेदी मिश्रित तिरछे होठों पर एक फ़ीकी मुस्कान आती है। मैं उत्साहित होकर तुम्हारा हाथ पकड़ता हूँ, कहता हूँ

'प्यास तो तुम्हें भी लगी होगी, बल्कि तुमने अब तक कुछ खाया भी नहीं है, चलो, कुछ खा लें।

तुम अपना हाथ छुड़ा लेती हो, और मेरे साथ चलने लगती हो।

आखिर एक कतार में पुराने ढंग के छप्पर वाले तीन होटल दिखाई देते हैं। तीनों की छत एक है और लगता है कि एक जैसे दिखते हैं। तीनों में ही गंदी-सी कुछ कुर्सियाँ और मेजें पड़ी हैं। हम किनारे वाले होटल की एक मेज के आमने-सामने बैठ जाते हैं। मैं मैले हाफ पैंट और बनियान वाले लड़के से दो आमलेट, चार टोस्ट, कुछ केक और दो कप चाय लाने के लिए कहता हूँ। भिनभिनाती मक्खियोंवाली जिन गंदी प्लेटों में वह केक, आमलेट और टोस्ट लेकर आता है, उन्हें देखकर छूने की भी इच्छा नहीं होती लेकिन शायद तुम्हें भूख बहुत जोर से लगी है। मैं जब तक चम्मच से उन्हें उलट-पलट कर देखता हूँ तब तक तुम जल्दी जल्दी खाना शुरू कर देती हो। तुम्हारे थिरकते हाथों और दाँतों की विचित्र हरकत की ओर से मैं बमुश्किल अपना दृष्टि हटाता हूँ। तुम्हारे खाने के ढंग को देखकर मुझे उस भिखारिन का ध्यान आता है जो जूठन मिलने पर इसी व्यग्रता से रोटी का टुकड़ा चबाया करती है। मेरे गले में कुछ अटक-सा जाता है टोस्ट के टुकड़े को चबायी हुई लुगदी को मैं पानी की घूँट के साथ किसी तरह निगलता हूँ।

तुम्हारे प्रति, इस होटल के प्रति और सब कुछ के प्रति एक लिजलिजी वितृष्णा से मैं सिहर उठता हूँ।

खा-पीकर तुम तृप्ति की साँस लेती हो और दोनों बाँहें फैलाकर देह तोड़ती हुई उठ खड़ी होती हो। होटल के बाहर आकर तुम मेरा हाथ पकड़ लेती हो और कहती हो

मुझे नाव में बैठना बहुत अच्छा लगता है। हम नाव में वापस चलेंगे।

मैं जल्द से जल्द घर पहुँचना चाहता हूँ नाव द्वारा लौटने में अधिक समय लगने की संभावना है लेकिन मैं तुम्हारे प्रस्ताव का विरोध नहीं करता असहाय होकर जैसे स्वयं को तुम्हारी मर्जी पर छोड़ देता हूँ। तुम्हारा

हाथ मुझे बेहद ठण्डा और निर्जीव लगता है, जैसे वह किसी ताज़ा लाश का हो। मैं सिगरेट जलाने के बहाने हाथ छुड़ा लेना हूँ।

हम घाट के पास पहुँचते हैं तब तक सूरज सिर पर से नीचे की ओर सरक चुका होता है, पेड़ों के साये भी लम्बे होकर पसरने लगते हैं लेकिन धूप में तेज़ी अब भी वैसी ही है। घाट के ऊपर पन्द्रह-बीस लोगों की भीड़ है जिनमें स्त्रियाँ, पुरुष और बच्चे सभी हैं। तुम्हें ऊपर छोड़कर मैं नीचे आता हूँ, और पानी के पास वाली सबसे निचली सीढ़ी पर खड़ा होकर लहरों के झूले पर हौले-हौले झूलती नावों में से एक छोटी नाव वाले से बात तय करता हूँ। वापस आता हूँ तो पाता हूँ कि तुम नल के पास झुकी हुई मुँह धो रही हो। गीली होने से बचाने के लिए तुमने साड़ी कुछ ऊँची उठाकर घुटनों के बीच दबा रखी है, जिससे तुम्हारी पिण्डलियाँ दिखाई दे रही हैं—मटमैले रंग की, भूरे बालों वाली ढीली ढाली पिण्डलियाँ। मेरी दृष्टि के लक्ष्य से तुम शरमा जाती हो, और घुटनों के बीच दबी हुई साड़ी झट नीची हो जाती है।

पानी से चेहरा पोंछ कर जब तुम मेरी ओर मुखातिब होती हो तो मैं एकाएक तुम्हें पहचान नहीं पाता। लगता है तुम कोई और हो। लगता है तुमने अपने चेहरे से एक नकाब उतार दी है और अब जो चेहरा सामने है वह इसके पहले मैंने देखा हुआ नहीं है। तुम्हारे चेहरे पर अब तक छिपे हुए गड्ढे अधिक गहरे हो गये हैं तथा मुहासे और फुन्सियाँ बड़े होकर उभर आये हैं। लिपस्टिक धो-पुँछ जाने के कारण होंठ एकदम सफ़ेद दिखाई देते हैं, लगता है, उनमें खून बिल्कुल नहीं है। सामने के बाल छितरा गये हैं, और बालों मे हट जाने के कारण बड़े-बड़े कान दिखाई देने लगे हैं। जूड़े के कांटे ऊपर नीचे निकल आये हैं, जिनमें अटकी सूखी वेणी अजीबोगरीब लगती है।

मुझसे अधिक देर तक तुम्हारे चेहरे की ओर देखा नहीं जाता। घाट

की सीढ़ियों की ओर बढ़ता हुआ कहता हूँ कि नाव वाले से बात हो गयी है, और वह हमारा इंतज़ार कर रहा है। तुम कमर के पास से साड़ी ठीक करती हुई मेरे पीछे-पीछे सीढ़ियाँ उतरने लगती हो। नाव को देखकर तुम खुश हो उठती हो, चहककर कहती हो

'ओह, कितनी अच्छी लगती है, ठीक जैसी बंगाली फ़िल्मों में दिखाई जाती है!'

मेरे हाथ का सहारा लेकर तुम नाव पर चढ़ती हो और चटाई की अर्द्धचंद्राकार छत के नीचे जाकर धम् से बैठ जाती हो। मैं भी दीवार का सहारा लेकर बैठ जाता हूँ। यहाँ छाया है। लकड़ी के जिस पटरे पर हम बैठे हैं वह भी नीचे पानी से सम्पर्कित रहने के कारण ठण्डा है। नाव के चलते ही नदी की गीली हवा का एक झोंका भीतर आकर हमारे संतप्त तन मन को शीतल कर जाता है। मैं सुकून की साँस लेता हूँ।

नदी का तट क्रमशः दूर होता जाता है। वहाँ खड़े स्त्री-पुरुष और बच्चे क्रमशः छोटे होते हुए खिलौनों जैसे लगने लगते हैं। उस पार जूट मिलों की चिमनियाँ अब अपेक्षाकृत निकट और बड़ी मालूम देती हैं। लहरों की मर्मर धुन और एक लय में बँधी हुई चप्पुओं की आवाज़ हमारे तन-मन का तनाव ढीला कर देती है। समूचा माहौल सहसा संगीतमय हो उठता है।

हमारी नाव लंगर डाले हुए एक जहाज़ के बगल से गुज़रती है तो डेक पर खड़े तीन चार खलासी ज़ोर से एक फ़िल्मी गाना गा उठते हैं। तुम हौले से हँसती हो फिर मेरी ओर ज़रा झुककर कहती हो

"उन लोगों को हमारी यह सोनार-तरी कितनी रहस्यमय और रोमांटिक लग रही होगी!

तुम सीने के बल लेट जाती हो और अर्थपूर्ण दृष्टि से मेरी ओर देखती हुई टाँगें हिलाने लगती हो। फिर नज़दीक खिसक कर चेहरा मेरे घुटनों पर रख देती हो। कुछ देर घुटनों के पास फूली हुई पतलून को दाँतों में भींचकर खिलवाड़ करती हो फिर घुटनों पर अपने गाल रगड़ती हुई बिना मेरी ओर देखे हौले-हौले कहती हो

'तुम सुबह टक्सी में कुछ कहना चाहते थे न?"

मेरा ध्यान इस समय तुम्हारे बालों की ओर है। मुझे लगता है, बालों की एक पूरी तह तुम्हारे सिर से खिसककर अलग हट गयी है। एकाएक मैं कुछ समझ नहीं पाता, आँखों में आश्चर्य लिए विमूढ़-सा देखता रहता हूँ इसलिए जब बात समझ में आती है तो एक अप्रत्याशित धक्का-सा लगता है, और इस सब में मैं तुम्हारा प्रश्न नहीं सुन पाता। पूरे एक मिनट तुम उत्तर की प्रतीक्षा करती हो, फिर चेहरा उठाकर मेरी ओर देखती हो कुछ देर एकटक देखती रहती हो गोया मेरी आँखों का भाव पढ़ने की कोशिश कर रही हो और पता नहीं मेरी आँखों में क्या पढ़ती हो, कि सहसा एक झटके से उठकर बैठ जाती हो और इसके पहले कि मैं कुछ कहूँ, दोनों हथेलियों में अपना चेहरा छिपाकर सुबकने लगती हो।

मैं चुप बैठा देखता हूँ। थोड़ी देर रो लेने के बाद तुम जैसे कुछ निश्चय कर लेती हो, मेरी ओर पीठ करके लेट जाती हो, और कुहनी के बल सधे हुए बाएँ हाथ की हथेली पर सिर टिका कर नदी की लहरों और दूसरे किनारे की चिमनियों को देखने लगती हो।

जिस अन्दाज़ से तुम लेटी हो, उससे तुम्हारा ब्लाउज सीने के पास से फूल आया है, और लो कट' ब्लाउज के गले में से तुम्हारे उभार माँस के दो भारी और निर्जीव लोथड़ा-से दिखाई दे रहे हैं।

शायद तुम्हारी कुहनी दुखने लगती है। तुम लेटी-लेटी ही सीधी हो जाती हो और दोनों बाँहें सिर के नीचे लगाये शून्य दृष्टि से चटाई की अर्द्ध चन्द्राकार छत की ओर ताकती हो।

इस समय तुम कितनी बड़ी दिख रही हो! तुम्हारा शरीर किस कदर फैला हुआ और ढीला लग रहा है! भ्रम होता है गोया नाव के भीतर से निकाल कर एक प्रौढ़ा की लाश वहाँ लिटा दी गयी हो।

मैं एक अनाम भय से सिहर उठता हूँ। तुम्हारी ओर से आँखें हटा लेता हूँ और अर्द्ध चन्द्राकार छत के नीचे से निकल कर बाहर चप्पू चलाते एक माँझी के पास पटरे पर बैठ जाता हूँ।

आउट्राम घाट पर नाव लगती है तो मैं पहले नीचे उतर जाता हूँ। जब तुम उतरने लगती हो तो सहारा देने के लिए अपना हाथ तुम्हारी ओर बढ़ाता हूँ। लेकिन तुम मेरी ओर नहीं देखतीं, मेरा हाथ भी नहीं थामतीं, बिना किसी सहारे के ही सँभल-सँभल कर पैर जमाती हुई नीचे पथरीले ढाके पर उतर आती हो। हम सीढ़ियाँ चढ़कर ऊपर आते हैं, तो मैं तुमसे पूछता हूँ कि किसी रेस्तराँ में चलकर एक कप काफी पीना पसन्द करोगी या सीधे घर जाना। तुम उत्तर नहीं देतीं और सामने से जा रही टैक्सी को हाथ से रुकने का संकेत करती हो।

रास्ते भर हम दोनों चुप रहते हैं। घर के सामने टैक्सी रुकने पर तुम बिना कुछ बोले उतर जाती हो और बिना मेरी ओर एक बार भी देखे दरवाज़े की ओर बढ़ती हो। टैक्सी के खुले फाटक पर एक बाँह रखे मैं तुम्हारे दूर होते आकार को देखता हूँ। मुझे इस समय फिर लगता है कि तुम्हें पहचान नहीं पा रहा हूँ या तुम्हारे जिस रूप को पहचानता रहा हूँ वह यह नहीं है। इस समय तुम तुम नहीं हो, लगता है हज़ारों वर्ष आयु की एक बुढ़िया हज़ारों कोस पैदल चलने के कारण

थक चुकी है और अब अपनी मंज़िल के आखिरी पड़ाव की ओर लँगड़ाती हुई चली जा रही है।

*
*
*

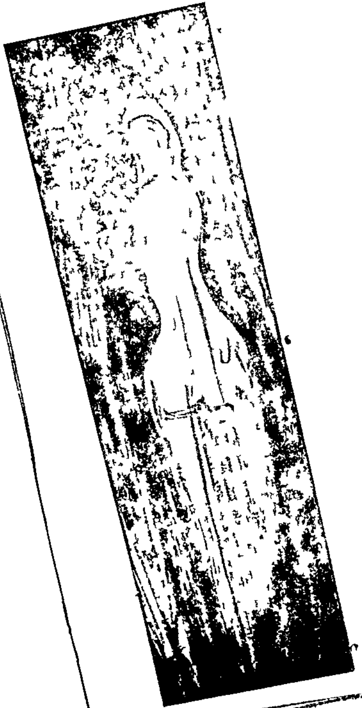
और आज!

तुम प्रशंसकों से घिरी खड़ी हो जो तुम्हारे गीत की तारीफ कर रहे हैं। होंठों पर अपनी चिर-परिचित औपचारिक मुस्कान चिपकाये तुम सबकी प्रशंसाओं और बधाइयों को ग्रहण कर रही हो।

तुम इस समय कितनी ताजा और आकर्षक लग रही हो—जाड़े के दिनों में आम-नहायी सफेद कपोती-सी!

मैं पाँच वर्ष पहले के गाढ़े परिचय वाली मुस्कान बरबस अपने होंठों पर ले आता हूँ, और तुम्हारी ओर बढ़ता हूँ।

*



पत्नी

* * * पत्नी

मुझे किस जनम के पापों का फल दे रहे हो भगवान! अपनी जान में मैंने इस जनम में तो कोई पाप किये नहीं, पता नहीं, किस जनम में कौन-से पाप किये थे जिनका अब प्रायश्चित करना पड़ रहा है।

मेरी जान को यह क्या जंजाल लगा दिया है मेरे परमात्मा? निगोड़े मरते भी नहीं, बस, मेरी जान को चिपके रहते हैं। मरकटा बड़कू भी रट किये जा रहा है कि खाऊंगा तो तेरे ही हाथ से। अब मैं तुझे खिलाऊँ कि ये बची हुई रोटियाँ सेंकू?

यह लो, छोटकू भी गला फाड़ने लगा! अभी-अभी तो उसे थपथपाकर, किसी तरह कमरे में सुलाकर आयी थी और रसोई में बैठकर दो रोटियाँ भी नहीं सेंकी होंगी कि उसने फिर गीत गाना शुरू कर दिया। उसे लाकर ये सूखी छातियाँ जब तक उसके मुँह में नहीं ठूंस दूंगी कलमुहा इसी तरह सप्तम स्वर में चीखता रहेगा।

ले, अब तो चुप हो जा! अरे, क्या चबा ही डालेगा, मरभुक्खा? छोड़, अरे छोड़ न, दूध है कहाँ इन सूखी छातियों में जो झिंझोड़े जा रहा है! ले-देकर दिन में दो बार रूखी-सूखी रोटियाँ खाने को मिलती हैं, तो दूध कहाँ से उतरे? तेरे बाप की समूची कमाई तो उस 'चरनी' के पीछे खत्म हो जाती है, मुझे पेट भर खाने को मिले तो कहाँ से?

लो, अब इस बच्चे ने चिल्लाना शुरू कर दिया! छोटकू को गोद

मे क्या ए लिया, इसकी जा ही निक गयी। अब म तुम ाना को गा में लिये बठी रहूँ या परात क न आने क। ततम क !

ह गापिया के नाथ ! क्न गुनाग मरी पुरार ? गज की एक पुकार पर तुम नग परा दौडे आय थ ब्रजवासिया की रक्षा क लिए अपनी एक अगुली पर गावरधन परवत का धारण कर लिया था क्या मरी आवाज़ तुम तक नही पहुँचती मर कान्हा !

अरे कुछ बोल्गा भी या इसी तरह गग पाँ जायगा ? टीन म बोल यू मेरी समझ में नही आती तरी भाषा ? क्या कहा ? तमनम सायेगा ? यहाँ रोटिया के लाले पड़े हैं, और तुझे चमचम खाने की सूझ रही है ! अच्छा अगर चमचम ही खाना है तो थाडी दर जा का बस में रख। अभी तरे पापा उस चुडल' के साथ मिठाइया क पाकिट ल्कर आते हागे—तुझे भी बचा-खुची मिल जायेगी ।

चुडल ! बेशरम कहीं की !! कस रडिया की तरह सोल्ह सिणगार करके तुम्हारे साथ गयी है !!! मने तो लाज क मारे मुह फर लिया था लेकिन वह निरल्ज्ज तो लाज शरम जस घोल्कर पी गयी है ! अब भी याद करती हूँ तो घिरणा स जी मिचलाने लगता है कधा तक नगी बाहें, पीठ पर तो ब्लाउज जस था ही नही, सामने भी छातिया तक कटा हुआ था पता नही, ये आजकल की पढ़ी लिखी छोकरियाँ पेट और कमर क्या दिखाती फिरती हैं ! ब्लाउज तो हम भी पहनता हैं लेकिन क्या मजाल जो देह का कोई अग दिख जाए । लेकिन ये पढक्कड लडकिया तन ढकने को कपडे थाडे ही पहनती हैं इनका बस चल तो नगी ही सडका पर घमा करें ।

ला, बेचारा छाक्क आखिर भूखा ही सो गया । दूधवाला भी तो अभी

तब नहा आया, वरना इसे शीशी से ही थोड़ा दूध पिला देती, तो रात भर पोथी-सा सोया रहता।

अरे, अरे, गिर जायेगा, बेटा। आखिर तू भी तमतम करता-करता ही ऊँघने लगा न। चल तुझे भी कमरे में सुला आऊँ। तेरे पापा आयेंगे तो तुझे उठाकर चमचम खिला दूंगी। चल बेटा सोजा। मेरे तुम दोनों की तकदीर में बिलखना ही लिखा है तो मैं क्या करूँ, मेरे राजकुँवर।

ये थोड़ी-सी रोटियाँ और सेंक लूं तो छुट्टी मिले। तुम लोगों का क्या भरोसा, कबतक वापस आओ। कह तो गये थे कि घंटा भर में लौट आएँगे, बस अपनी इस बहन के लिए (आग लगे ऐसी बहन को। चुडैल अभी तक भी स्वयं को तुम्हारी बहन ही कहती है।।) थोड़ा-सा फर्नीचर और खिड़कियां - दरवाजा के परदे खरीदने हैं। लेकिन क्या मैं समझती नहीं कि फर्नीचर और परदा का तो बहाना है किसी होटल या सिनेमा में बैठे मज़े उड़ा रहे होगे।

और मैं यहाँ चूल्हे के पास बैठी रोटियाँ सेंक रही हूँ।

खैर, यह चुडैल तो जमी है है, लेकिन तुम्हें यह क्या होता जा रहा है। तुम तो ऐसे नहीं थे।। जरूर इस चुडैल ने ही तुम्हारे ऊपर कुछ कर दिया है। मुझे ब्याहा लाये पूरे चार साल हो गये तुम्हारे साथ बिताये इन चार बरसों की एक एक बात मेरे दिल पर लिखी है कितने अच्छे थे तुम कितना प्यार करते थे मुझे। इन चार बरसों का एक एक पल मुझे याद है खूब अच्छी तरह याद है

*
*
*

में क्या ए लिया, इसकी जान ही निकल गयी। अब म तुम दाा को गोद में लिये बठी रहूँ या परात क ग्ग आटे वा। गनम करूँ!

ह गोपिया के नाथ! क्व सुनाग मरा पुकार? गज की एक पुकार पर तुम नगे परा दौड आय थ ब्रजबासिया की रक्षा क लिए अपनी एक अगुली पर गोवरधन परवत का धारण कर लिया था क्या मरी आवाज तुम तक नही पहुँचती मर कान्हा!

अरे कुछ बोलगा भी या इसी तरह गला फाड़े जायगा? ठीक स बोल यू मेरी समय में नही आती तरी भाषा? क्या कहा? चमचम खायेगा? यहाँ रोटिया के लाल पड़े हैं और तुझे चमचम खाने की सूझ रही है! अच्छा अगर चमचम ही खानी है ता थोडी दर जा की बस में रख। अभी तेरे पापा उस चुडल के साथ मिठाइया के पाकिट लेकर आते होंगे—तुझे भी बचा-खुची मिल जायगी।

चुडैल! बेशरम कही की!! कसे रंडिया की तरह सोलह सिणगार करके तुम्हारे साथ गयी है!!! मने तो लाज क मारे मुह फेर लिया था लेकिन वह निरलज्ज तो लाज शरम जस घोलकर पी गयी है! अब भी याद करती हूँ तो घिरणा से जी मिचलाने लगता है कधा तक नगी बाँह पीठ पर ता ब्लाउज जस था ही नही सामने भी छातिया तक कटा हुआ था पता नही ये आजकल की पढ़ी लिखी छोकरियाँ पेट और कमर क्या दिखाती फिरती है! ब्लाउज तो हम भी पहनती हैं, लेकिन क्या मजाल जो दह का कोई अग दिख जाए। लेकिन य पढकेड लडकिया तन ढकने को कपडे थोडे ही पहनती है इनका बस चल ता नगी ही सडका पर घमा करें।

लो बेचारा छोटक आखिर भूखा ही सो गया। दूधवाला भी तो अभी

तक नही आया, वरना इसे शीशी से ही थाडा दूध पिला देती, तो रात भर पोथी-सा सोया रहता।

अरे, अरे, गिर जायेगा, बेटा! आखिर तू भी तमतम करता-करता ही ऊँघने लगा न! चल तुझे भी कमरे मे सुला आऊँ। तेरे पापा आयेंगे तो तुझे उठाकर चमचम खिला देगी। चल बेटा सोजा। तुम दोनो की तकदीर में बिलखना ही लिखा है तो मैं क्या करूँ, मेरे लाडकुँवर!

ये थोडी-सी रोटियां और सेक लूँ तो छुट्टी मिले। तुम लोगो का क्या भरोसा, कबतक वापस आओ। कह तो गये थे कि घटा भर में लौट आएँगे, बस अपनी इस बहन के लिए (आग लगे एसी बहन को! चुडैल अभी तक भी स्वय को तुम्हारी बहन ही कहती है!!) थोडा-सा फर्नीचर और खिडकियो - दरवाजा के परदे खरीदने है। लेकिन क्या म समझती नही कि फर्नीचर और परदा का तो बहाना है, किसी होटल या सिनेमा में बैठे मजे उडा रहे होगे!

और म यहाँ चूल्हे के पास बैठी रोटियां सेक रही हूँ!

खर, यह चुडल तो जसी है है लेकिन तुम्हें यह क्या होता जा रहा है! तुम तो ऐसे नही थे!! जरूर इस चुडल ने ही तुम्हारे ऊपर कुछ कर दिया है। मुझे ब्याही आये पूरे चार साल हो गये तुम्हारे साथ बिताये इन चार बरसो की एक एक बात मेरे दिल पर लिखी है कितने अच्छे थे तुम कितना प्यार करते थे मुझे! इन चार बरसो का एक एक पल मुझे याद है खूब अच्छी तरह याद है

*
*
*

हाँ खूब अच्छी तरह याद है जब आज से चार बरस पहले तुम पहली बार हमारे यहाँ आये थे। तुम्हारे आने के सप्ताह भर पहले ताऊजी ने बताया था कि वे कलकत्ते में एक लड़का देखकर आये हैं जो बहुत पढ़ा लिखा और विद्वान है साथ ही साथ आठ सौ की अच्छी नौकरी पर भी है। घर में और कोई नहीं, अकेला है और कलकत्ते में एक बढ़िया फ्लैट में रहता है। ताऊजी ने कहा था कि संयोग से ही ऐसा लड़का मिल गया है हमारी गीता की तकदीर ही अच्छी है, नहीं तो हमें ऐसे लड़के की कहाँ उम्मीद थी। बस, अब तो ठाकुरजी से यही प्रार्थना है कि हमारी गीता उसे पसन्द आ जाए। और घर में ताई अम्मा और चाची ने ठाकुरजी के लिए सवा-सवा रुपये के परसाद की अलग अलग मानता मान ली थी।

तुम अपने दोस्त के साथ आये। हमारे छोटे-से कस्बे के घर घर में इस बात की चर्चा थी कि गीता को देखने के लिए कलकत्ते से कोट पतलून वाले दो बाबू आये हैं। हमारे घर में मोहल्ले की औरतों और बच्चों का जमघट-सा लग गया था।

मैं गुड़िया की तरह सजी हुई जब भीतर के कमरे से बैठक में दाखिल हुई तो मेरी आँखें लाज से झुकी हुई थी और घबराहट के कारण पैर काँप रहे थे। अगर बुआ ने मुझे कंधे से पकड़ नहीं रखा होता तो शायद मैं गिर पड़ती। नजरें नीची किये हुए मैं चुपचाप कुर्सी पर बैठ गयी। तख्त से नीचे लटकते हुए केवल तुम्हारे पैर मुझे दिखाई दे रहे थे तुमने आसमानी रंग का पतलून उसी रंग के मोजे और चमकते हुए काले बूट पहन रखे थे। मेरी बहुत इच्छा हुई कि एक बार पलकें उठाकर

तुम्हार चेहरे की ओर दखू, लेकिन साहस नहीं हुआ। तुम जो पूछने गय, मैं किसी तरह उत्तर देती गयी। तुमने अपने हाथ की एक पत्रिका पढकर सुनाने के लिए मेरी आर बढाइ, मैंने कांपते हाथा से पत्रिका पकड ली नजरें खुले पष्ठ पर डाली तो सामने तुम्हारा नाम छपा था। हर प्रयत्न के बावजूद म तुम्हारे नाम का उच्चारण नही कर सकी, तो केवल शीषक पढकर ही लेख पढ़ना शुरु कर दिया। मुझे अपने चेहरे पर तुम्हारी दृष्टि का स्पश महसूस हो रहा था, लेकिन मेरी नजरें नीचे ही झुकी रही। एक बार तुमने कहा भी कि मैं बहुत शर्मीली हूँ कि आज क युग म शहरा की लडकिया तो लडका से भी ज्यादा तेज-तर्रार होती है। इसके बाद ताऊजी ने भी कई बार कहा कि बटा चेहरा ऊपर करो, इसमें शरमाने की कोई बात नही। तब एक बार बस एक बार मने साहस करके पलकें ऊँची की क्षण भर के लिए मरी निगाहें तुम्हारे चेहरे पर ठहरी, तुम्हारी आखा स मिली और मने घबराकर तत्काल फिर नीचे झुका ली। इसके बाद मझे छुट्टी मिल गयी, और बुआजी मुझे सहारा देकर भीतर ले आयी।

बठक से लगे हुए भीतर वाले कमरे म औरतो और बच्चा का जमघट लगा था। दरवाजे की सधिया स उठक का दृश्य दखने के लिए परस्पर छीना झपटी हा रही थी। भीतर पहुँचते ही बुआ ने मेरा कधा छोडा और खुद दरवाा म चिपक कर खडी हो गयी।

म कुछ देर वसे ही खडी रहा। बाहर बठक से तुम्हारी आवाज आ रही थी। तुम ताऊजी से कह रह थे मने अपने काना मे स्पष्ट सुना, तुम कह र थे कि लडकी देखने मे सुन्दर है सुशील और सीधी भी लगती है पढी लिखी नही है, लेकिन तुम्हारी दृष्टि म यह एक अवगुण होने की जगह गुण ही है। तुम कह रह थे कि अगर तुम्हें पढी लिखी लडकी की ही जरुरत हाती ता इतनी दूर इस गाँव में आते ही क्यो? क्या कलकत्ते में पढी लिखी लडकिया की कमी है? लेकिन सच्ची बात

ता यह है कि तुम्हें इन पत्री लिखी लड़कियों के बनावटीपन से नफ़रत हो गयी है। तुम बता रहे थे कि शहरों की ये पढ़ी लिखी लड़कियाँ ऊपर से दिखती कुछ हैं और दरअसल होती कुछ और हैं उनकी चमड़ा काली पीली या नीली कैसी भी क्यों न हो जब वे चेहरे पर लीपा-पोती करके बाहर निकलती हैं तो लगता है सौन्दर्य प्रतियोगिता में भाग लेने जा रही हैं। इनके चेहरे की तरह इनकी बातें भी बनावटी होती हैं और यह सब देखते-देखते तुम्हें इन शहरी तितलियों से घृणा हो गयी है। ये अच्छी पत्नी बन ही नहीं सकतीं। तुम अपने लिए ऐसी पत्नी चाहते हो जिसकी सुन्दरता बनावटी नहीं हो महज़ क्षणिक नहीं हो यानी घटा-दो घटा धूप में चलने ही जिसकी सुन्दरता के मेकअप की परतें न उतर जाएँ और भीतर का असली खाल नहीं निकल आये वरन जो सचमुच सुन्दर हो जिसकी सुन्दरता सहज स्वाभाविक हो चिरस्थायी हो।

मैं तुम्हारे इन भारी भारी शब्दों का कुछ भी अर्थ नहीं समझ सकी लेकिन फिर भी मंत्रमुग्ध-सी सुन रही थी। मेरी समस्त इन्द्रियाँ मेरे कानों में आ बैठी थीं। तुम कह रहे थे कि तुम्हें ऐसी पत्नी चाहिए जो तुम्हारे छोटे-से घर को सँभाल ले और उसी को अपना स्वर्ग समझे तुम शाम को दफ्तर से थके हुए घर लौटो तो तुम्हें घर साफ़-सुथरा और व्यवस्थित मिले, कपड़े बदलकर आराम-कुर्सी पर बैठो तो कोई तुम्हारे सामने एक कप चाय और हल्का-सा गरम नाश्ता लाकर रख दे तुम शान्ति से अपने कमरे में बैठे लिखते-पढ़ते रहो और जब खाने का समय हो जाए तो तुम्हें कोई गरम-गरम ताज़ा और स्वादिष्ट खाना खिलाये। शहर की पढ़ी लिखी लड़की से इन सबकी अपेक्षा करना निरी मूर्खता है—यह बात तुम अपने दोस्तों के पारिवारिक जीवन को देख कर अच्छी तरह समझ चुके हो। यही कारण है कि तुम कलकत्ते से इतनी दूर पत्नी खोजने आये हो और तुम्हें इस बात की खुशी है कि तुम्हें वे सब गुण मुझ में दिखाई दिये हैं जिनकी तुम्हें तलाश थी।

गाँव की सब लड़कियाँ और उनके माँ-बाप मेरे भाग्य से ईर्ष्या कर रहे थे कि मुझे बिन-माँगे इतना अच्छा घर वर मिल रहा था। न तुमने दहेज की माँग की, और न प्रचलित नेग चार किये। तुम सीधे-सादे ढंग से कुछ दोस्तों के साथ आये और सीधे-सादे ढंग से मुझे ब्याह कर अगले ही दिन फर्स्ट क्लास के डब्बे में कलकत्ता ले आये।

आह मेरे जीवन का वह प्रथम सुखद दिन था! मैं डब्बे की गद्देदार सीट के एक कोने में लाज से सिमटी घुटनों में मुँह छिपाये बैठी थी। गाड़ी चलने लगी तो तुमने हँसते हुए अपने साथियों से विदा ली कुछ देर दरवाजे के छड़ को पकड़े पीछे की ओर भागते स्टेशन को देखते रहे, फिर तुमने भीतर से दरवाजा बन्द कर लिया। मेरी छाती जोर-जोर से धड़क रही थी। एक अनाम भय से सिहरकर मैं कोने में और अधिक दुबक गयी। बिना गर्दन उठाये ही समझ रही थी कि तुम बन्द दरवाजे के पास खड़े मेरी ओर देख रहे हो। धीरे धीरे निकट आते पैरों की आवाज सुनाई देती है। पास आकर तुम कुछ देर मौन खड़े रहते हो। तुम्हारे दिल की गहराइयों से केवल एक शब्द निकलता है—'मिठास में सना हुआ... गीते!'

मैं कुछ और सिमट जाती हूँ। तुम आहिस्ते से मेरे पास सीट पर बैठ जाते हो, कुछ देर मौन बैठे रहते हो। फिर घुटने पर रखा मेरा दाहिना हाथ अपनी दोनों हथेलियों में सहेज लेते हो। काफी देर तक मेंहदी रची हथेली और अंगुलियों और शादी की नई अँगूठियों से खेलते रहते हो। पहला स्टेशन आता है, गाड़ी कुछ मिनटों के लिए रुककर फिर चलने लगती है। लेकिन तुम उसी तरह मेरा हाथ अपनी दोनों हथेलियों में सहेजे बैठे रहते हो। इसके बाद तो कई स्टेशन आते हैं, गाड़ी रुकती है और फिर चलने लगती है लेकिन तुम उसी तरह बैठे रहते हो।

सहसा दूसरी बार तुम्हारे मुँह से वही शब्द निकलता है और भी अधिक मिठास में सना हुआ... गीते!'

म इस बार भी नहीं बोल्गी, तो तुम बहुत प्यार-मनुहार म ऱाना अंगु रियों में लेकर मेरा चेहरा ऊँचा उठाते हो चेहरा ऊँचा होने पर भी मेरी पलकें नीचे ही झुकी रहती है तुम तीसरी बार उतनी ही मिठास से मेरा नाम पुकारते हो गीनिक ! फिर कहते हो 'क्या म इतना बुरा हूँ कि मेरी ओर एक बार भी नहा देखोगी ?

अनायास मेरी पलकें ऊपर उठ जाती है तो तुम अपना चेहरा निकट लाकर मेरी आँखों में झाँकते हो तत्काल मेरी पलकें फिर झुकने लगती हैं, तो तुम जल्दी स मनुहार भरे शब्दों में कहते हो नहा रानी नहा इन्हें झुकाओ मत यो ही रहने दो। म तुमसे और कुछ नहा चाहता बस, मेरी इतनी प्रार्थना मान लो।

और उसके बाद हवाई स्टेशन तक तुम एक भी शब्द नहीं बोले मेरे हाथों से खेलते रहे और मेरी आँखों की गहराई म डूबे हुए पता नहा क्या सोचते रहे । मुझे जीवन में पहली बार लगा था कि म सफेद बादलों पर बैठी हुई कहा अनन्त में उड़ी जा रही हूँ।

कलकत्ते के जिस घर म मने पहली बार कदम रखा उसे देख कर एक बार तो दंग रह गयी। अब तक म गांव के जिस घर में रहती थी उसमें मेरे पिताजी, ताऊजी और चाचा तीनों एक साथ रहते थे। तीनों परिवारों के लिए एक-एक बड़ा कमरा था और कमरे के आगे दालान था उसी कमरे और दालान म समूची गृहस्थी का सामान अस्त-व्यस्त पड़ा रहता था और वही एक कमरा एक पूरे परिवार के सोने के काम आता था। एक कच्चा रसोड़ा थी जिसमें सबका खाना बनता था और आंगन में कुआँ था जिस पर बैठकर हम लोग नहा लिया करते थे। घर में दिन रात बच्चों की चिल्लपों छीना झपटी और मार-पीट मची रहती थी, और तीनों परिवारों की औरतों में बात-बबात पर तू-तू मैं-मैं हो जाती थी। यहाँ जिस फ्लैट में मने कदम रखा वह मेरे लिए एक नयी दुनिया थी।

तुमने मुझे कंधे से पकड़कर अपने साथ सटा लिया और सहारा देकर साथ ले जाते हुए एक-एक कमरा दिखाने लगे। पहले कमरे के बीच में फर्श पर मुलायम गलीचा बिछा था जिस पर बहुत डरते हुए मैंने चप्पलें खोल कर कदम रखा। गलीचे पर बहुत चिकने और चमचमाते काठ के मापे रखे थे जिनके बीच में काले रंग की मेज थी। मैंने शरमाई नजरें उठाकर देखा कि दीवारों पर सादे फ्रेम में मढ़ी हुई तस्वीरें टँगी थीं। मेरी पहली नजर जिस तस्वीर पर पड़ी उसमें बर्फ से ढँका हुआ एक सफेद पहाड़ और बहुत-से लम्बे-लम्बे सीधे खड़े हुए पेड़ थे। मैंने इस आशा से अपनी नजर घुमाई कि शायद मेरे इष्टदेव राधाकृष्ण की भी कोई तस्वीर वहाँ हो तो मैं अपने इस सौभाग्य के लिए उन्हें मन ही मन प्रणाम कर लूँ, लेकिन जिस दूसरी तस्वीर पर मेरी नजर पड़ी उसे देखकर शरम से मेरी पलकें नीचे झुक गयीं। हाय राम, पलँग पर एक नंगी औरत लेटी हुई थी—एकदम नंगी। दोनों बाहें बेशर्मी से सिर के नीचे लगाये। इसके बाद मेरी हिम्मत नहीं हुई कि और तस्वीरों की ओर नजर उठा सकूँ।

तुमने मुझे और अधिक सटा लिया था और बहुत प्यार से बता रहे थे, "यह हमारा ड्राइंग रूम है रानी। जब बाहर से मिलने-जुलने वाले आते हैं तो इसी में बैठाये जाते हैं।" फिर तुमने हँसकर कहा था, "जब हम तुम्हारे घर गये थे तो तुम्हारे ताऊजी ने हमें जिस बैठक में तख्त पर बैठाया था, समझ लो यह ड्राइंग रूम उसी का शहरी और आधुनिक रूप है।"

मैं पूछना चाहती थी कि तुमने इस कमरे की दीवारों पर ऐसी गंदी तस्वीरें क्या टाँग रखी हैं, और यहाँ भगवान की तस्वीरें क्या नहीं हैं, लेकिन संकोच के कारण मेरे मुँह से आवाज नहीं निकल सकी।

तुम मुझे दूसरे कमरे में ले गये जिसमें दीवार के पास एक मेज-कुर्सी थी और मेज पर किताबों का ढेर था। मैंने कमरे में चारों ओर निगाह

दौड़ायी तो ठगी-सी खड़ी रह गयी   चारों ओर दीवारों में लगी हुई लोहे की ऊँची ऊँची रैकें लगी थीं जो किताबों ही किताबों से भरी थीं। अनायास मेरे मुँह से निकल गया   हाय राम इतनी सारी किताबें!

तुमने प्यार से मेरा गाल थपथपाते हुए कहा   हाँ रानी यह मेरे लिखने पढ़ने का कमरा है। मैंने आश्चर्य से पूछा   लेकिन इतनी-सारी किताबों का आप क्या करते हैं? किताबें बेचने का धंधा करते हैं क्या?

मैं बोल तो गयी लेकिन इतनी जल्दी इतना सब बोल जाने की बेशर्मी पर स्वयं ही शरमा गयी और मैंने दाँतों में अपनी जीभ काट ली। तुमने झुककर प्यार से मेरा माथा चूमा और हँसकर कहा, नहीं पगली बेचने का नहीं किताबें लिखने-पढ़ने का धंधा करता हूँ।

फिर तुम मुझे तीसरे कमरे में ले गये। वहाँ बहुत ही बढ़िया किस्म के बिल्कुल नये दो पलँग एक-दूसरे से सटे हुए लगे थे और उन पर नया पलँगपोश बिछा था। पलँगों के पताने की ओर दीवार के सहारे एक शृंगार मेज थी जिसमें एक बड़ा आईना लगा था और आईने में दोनों पलँगों का पूरा प्रतिबिम्ब दिखाई दे रहा था। इस कमरे के फर्श पर भी एक नया गलीचा बिछा था। तुमने मुझे कंधे से पकड़े हुए इस कमरे का एक चक्कर लगाया और फिर आईने के सामने खड़े होकर मेरी आँखों में झाँकते हुए कहा   और यह हमारे सोने का कमरा है रानी! हमारा स्वर्ग!

तुमने मुझे कसकर बाँहों में भींच लिया   झुककर अपने होंठों से मेरा समूचा चेहरा टटोलने लगे   फिर मेरे होंठों पर तुमने अपने होंठ रख दिये और उन्हें चूमने लगे   मुझे घिन लगी कि यह तुम क्या कर रहे हो   मुँह का गंदा थूक निगलना   छि छि   और मैंने तड़पकर स्वयं को तुम्हारी बाँहों से छुड़ाने की कोशिश की   लेकिन दूसरे ही क्षण मेरी पलकें अपने-आप भारी होकर बंद हो गयीं, मेरी समूची देह निढाल होकर तुम्हारी बाँहों में झूल गयी   मुझे लगा कि मैं फिर

उन्हीं सफेद बादलों पर बैठी हुई आस्मान की अनंत नीली गहराइयों में डूबती जा रही हूँ। लगा जैसे युगों बाद तुमने अपना मुँह हटाया और हाथ का सहारा देकर मुझे उन अतल गहराइयों में से बाहर निकाला। फिर तुमने आश्वासन के भाव से हौले हौले मेरी पीठ थपथपाई मुझे कंधे से पकड़े हुए कमरे से बाहर निकले और दूसरे हाथ से संकेत करते हुए बोले "वह हमारा किचेन है और उसके बगल वाला बाथरूम। यही है हमारा समूचा संसार और यह सब कुछ तुम्हारा है रानी सब कुछ। यह समूचा घर और इस घर का स्वामी, दोनों तुम्हारे हैं। इन दोनों को सँभालकर सहेज कर रखना, गीले!''

तुमने एक छोटे से बच्चे की तरह अपना मुँह मेरे सीने में छिपा लिया।

मैंने उसी क्षण—उस घर में अपने प्रवेश के उस पहले ही क्षण—मन ही मन प्रतिज्ञा कर ली कि मैं अपने घर को और तुम्हें, दोनों को भरसक सहेजकर, सँभालकर रखूँगी।

और मेरे राधाकृष्ण इस बात के गवाह हैं कि मैंने इसमें अपनी ओर से कोई कसर उठा नहीं रखी। फिर भी अगर मुझसे भूल चूक हुई और मैं अपने इस प्रयत्न में सफल नहीं हुई, तो मैं तुम्हीं से पूछती हूँ कि बताओ, इसमें मैं कहाँ तक दोषी हूँ? तुम्हारे इस शहर के तौर-तरीके मैंने इसके पहले कहाँ देखे थे? तुम्हें क्या पता कि तुम्हारे इस फ्लैट में आने के पहले मैं जिस घर में रहती थी उसमें सब कुछ कबाड़खाने की तरह यों ही अस्त-व्यस्त पड़ा रहता था। तुम्हारे इस आधुनिक फ्लैट की सफाई और व्यवस्था मैंने इसके पहले कब देखी थी! इसलिए अगर मुझसे गाहे-बगाहे कोई भूल चूक हो जाती थी तो इसमें मेरा कहाँ दोष था! जैसे कि, तुम्हें अपने लिखने-पढ़ने के कमरे में कोई किताब या कागज-पत्र इधर-उधर किया जाना बिलकुल पसन्द नहीं था। तुम चाहते थे कि जब तुम शाम को दफ्तर से लौटो तो तुम्हें रैक की किताबें उसी तरह करीने से

सजी हुई मिलें, मेज पर रखे हुए कागज-पत्र ठीक उसी तरह रखे हुए मिलें जिस तरह तुम उन्हें छोड़ कर गये थे, पार्कर डॉट पेन उसी जगह और उसी कोण से रखा हुआ मिल जाता तुम जाते समय रख गये थे। शुरू-शुरू में मुझे तुम्हारी इस आदत का पता नहीं था, इसलिए मैं दोपहर में पढ़ने के लिए तुम्हारी रैक से किताबें निकालती और अपनी पसन्द की एकाध किताब लेकर शाम वहाँ रैक के ऊपर या मेज पर या कुर्सी पर डाल देती। अपनी माँ को चिट्ठी लिखना होती तो तुम्हारा पार्कर डॉट पेन ले लेती और तुम्हारे पैड पर चिट्ठी लिखती। मुझे इससे पहले चिट्ठियाँ लिखने की आदत तो थी नहीं इसलिए एक-एक बात सोच कर और धीरे धीरे लिखती। अक्सर यह होता कि मैं एक दिन में पूरी चिट्ठी नहीं लिख पाती और अधूरा चिट्ठी लिखा हुआ पैड और कलम सोने के कमरे में पलंग पर छोड़ देती। तुम शाम को दफ्तर से थके हुए आते मुझे बाँहों में भरकर चूमते कपड़े बदलकर पढ़ने के कमरे में आते और किताबें अस्त-व्यस्त देखकर वहीं से तेज आवाज़ में पूछते ये मेरी किताबें किसने निकाली थीं? मैं आकर अपराधिनी की मुद्रा में कमरे की दहलीज पर खड़ी हो जाती तो तत्काल तुम्हारे चेहरे का तनाव दूर हो जाता और तुम हँसकर कहते ओह तो हमारी रानीजी दोपहर में अध्ययन कर रही थीं! यह बहुत अच्छी बात है तुम ज़रूर पढ़ा करो, पढ़ने से इंसान का मानसिक विकास होता है। और तुम किताबों को करीने से रैक में सजाने लगते। मैं तुम्हारे लिए चाय लाने रसोई-घर की ओर चली जाती कि फिर तुम्हारी झुंझलाई हुई आवाज़ आती, 'भई, मेरा पेन नहीं मिल रहा है और राइटिंग पैड भी गायब है! मैं चाय का प्याला हाथ में लिये हुए जल्दी जल्दी आती और प्याला मेज पर रखकर भागी भागी सोने के कमरे से तुम्हारा कलम और पैड ले आती। तुम फिर होठों पर बरबस मुस्कान लाकर मेरे गाल पर हल्की चपत लगाते और कहते आह तो लेखक की पत्नीजी ने लिखना भी शुरू कर दिया है!' इसके बाद तुम चाय पीने और लिखने-पढ़ने में लग जाते और मैं रसोई में तुम्हारे लिए खाना बनाने चली जाती।

इसी तरह, शुरू शुरू में, मुझसे और भी कई भूलें हो जाती थीं। मुझे सिलाई-कढ़ाई का बचपन से शौक था, और मेरी छोटी बहन की शादी जल्दी ही होने वाली थी इसलिए मैं दोपहर में अक्सर ड्राइंग रूम में बैठी हुई जरी की साड़ियां-ब्लाउज़ों पर बेल-बूटे टांकने का काम किया करती और अपनी पुरानी आदत के अनुसार उन्हें यों ही अस्त-व्यस्त अवस्था में मेज़-कुर्सियों पर छोड़ देती। जब तुम शाम को आकर उन्हें ड्राइंग रूम में यों बिखरा हुआ पाते, तो क्षण भर के लिए तत्काल तुम्हारे माथे पर शिकन पड़ जाती लेकिन तुम मुझसे कुछ नहीं कहते या तो स्वयं ही उन्हें समेटने लगते या नौकरानी को बुलाकर कह देते कि ड्राइंग रूम में चीज़ों को यों बिखरा कर नहीं रखा करे।

अक्सर मैं रात को सोते समय साड़ी और ब्लाउज़ नीचे गलीचे पर डाल देती और सुबह उठकर नहा धोकर दूसरे कपड़े पहन लेती और पूजा-पाठ में लग जाती। तुम्हें सदा से ही देर से उठने की आदत रही है। तुम उठकर बिना चश्मा लगाये पलंग से उतरते और पैरों के नीचे साड़ी-ब्लाउज़ का स्पर्श लगते ही तुम्हारा मूड खराब हो जाता लेकिन तुम फिर भी कहते कुछ नहीं। साड़ी-ब्लाउज़ को उठाकर आलमारी के अंदर मैले कपड़ों में डाल देते।

आज महसूस करती हूं कि तुम उन दिनों कितने अच्छे थे! कितने स्नेही और सहनशील थे!! तुम्हें मेरी ये हरकतें बिल्कुल पसन्द नहीं थीं, लेकिन फिर भी तुमने मुझसे कभी कुछ नहीं कहा, कभी डांटा फटकारा नहीं। तुम चुपचाप सब कुछ सहन कर लेते क्योंकि तुम समझते थे कि मैं अभी नयी थी और धीरे धीरे मुझे इनकी आदत पड़ जायेगी। आज याद करती हूं तो लगता है कि वही मेरे जीवन के सबसे सुखी दिन थे जब तुम मुझे इतना अधिक प्यार करते थे मेरा इतना खयाल रखते थे।

तुम्हारी आदत थी कि तुम रात का खाना जल्दी खा लेते और सोने के कमरे में या तो पलंग पर सीधे लेटकर कोई पुस्तक पढ़ते या उल्टे लेटकर छाती के नीचे तकिया दबाकर कुछ लिखते। रोज रात में ऐसा होता कि मैं रसोई का सब काम काज निबटाकर और स्वयं खाना खाकर सोने के कमरे में आ जाती। पलंग पर तुम्हारे पास बैठ जाती और फुर्ती से पैड पर चलते तुम्हारे हाथ और कलम को टकटकी लगाए देखा करती। जब तुम्हें मेरी उपस्थिति का पता चलता तो तुम कलम पैड पर रख देते और होठों पर एक मोहक मुस्कान लाकर मेरी ओर देखते। मैं एक बच्चे की तरह भोलेपन से पूछती — तुम रोज रोज इतना सब क्या लिखते हो? तुम हँसकर कहते — कहानियाँ। मैं हुलसकर कहती — अच्छा! कहानियाँ लिखते हो? मेरी दादी भी हम सब भाई-बहनों को रोज रात में अच्छी-अच्छी कहानियाँ सुनाया करती थी। कभी एक राजा और उसकी सात रानियों की कहानी तो कभी किले में बन्द राजकुमारी की तो कभी परियों और राक्षसों की। हम सब भाई-बहनों को वे बहुत अच्छी लगती थीं। क्या तुम भी वही सब कहानियाँ लिखते हो? हमें भी सुनाओ न अपनी कहानियाँ। तुम हँसकर अपना कलम और पैड पलंग के पास की छोटी मेज पर रख देते बाएँ हाथ की कुहनी तकिये पर टिकाकर हथेली पर चेहरा रख लेते तथा नज़रें मेरी आँखों में न जाने क्या खोजने लगते। हँसकर केवल इतना कहते — तुम बहुत भोली हो बहुत मासूम और बहुत प्यारी भी! इसके बाद तुम उसी तरह मेरी आँखों में देखते रहते मेरे हाथों से खेलते रहते और घंटों पता नहीं किन खयालों में खोये रहते।

कभी तुम सीधे लेटे-लेटे मेरा सिर अपनी छाती पर रख लेते मेरे बालों में अपना मुँह गड़ाये किसी गीत या कविता की कोई पंक्ति गुनगुनाते और एक हाथ से मेरे माथे और गालों को सहलाते रहते थपकते रहते। मुझे इसी हालत में नींद आ जाती।

कभी तुम आवश में आकर मुझे गाल या गले या सीने पर जोर से चूम लेते और मेरी गोरी चमडी पर एक गोल गोल लाल दाग उभर आता, तो तुम अपनी अगुलियो के पोरो से उसको घटो सहलाते रहते। ऐसे अवसर पर तुम अक्सर एक ही बात बार-बार कहा करते, "सचमुच रानी, तुम बहुत खूबसूरत और बहुत नाजुक हो। मुझे तो तुम्हारा देह को छूते हुए भी डर लगता है। इच्छा होती है इन किताबो की तरह तुम्हें भी काच की आलमारी म बठा दूँ और दूर से तुम्हें देखा करूँ तुम्हारी पूजा किया करू।' इसके बाद तुम न जाने और भी क्या-क्या करते जिसका अर्थ मेरी समझ में कुछ नही आता।

जिस दिन तुम्हारी प्यार करने की इच्छा होती उत्तेजना से तुम्हारा चेहरा लाल हो जाता, कनपटी की नसें फूल उठती और चश्मे के भीतर से आँखें बहुत बडी-बडी दिखाई देती। तुम आवेग में आकर मुझे बाहो में भीच लेते और मेरी समूची देह पर जगह जगह चूमने-काटने लगते। जब तुम प्यार कर रहे होते और म बीच बीच मे 'आह' 'उई' आदि कहती तो तुम चिंतित होकर पूछते क्या रानी, तुम्हें कष्ट हो रहा है क्या ?' म इन्कारी में सिर हिलाती तो तुम कहते फिर तुम इस तरह क्यो कर रही थी ?' म लाज के मारे चुप रहती लेकिन तुम जानने की जिद पकड लेते तो शरमाकर कहती, औरतो को तो ऐसा करना ही चाहिये, वरना मर्द समझता है कि यह औरत कितनी बेशरम है जरूर इसकी भी इच्छा होगी। तुम आश्चर्य से पूछते 'यह तुमसे किसने कहा ?' म फिर चुप हो जाती और तुम फिर जिद करते तो म जानकार की तरह जवाब देती, इसमें किसी के कहने की क्या बात है। मैं खुद ही जानती हूँ बल्कि मने स्वय अपनी आँखो से देखा भी है। और मैं शरमाकर फिर चुप हो जाती, तो तुम बढावा देते हुए कहते, 'हा, हाँ बताओ, तुमने अपनी आँखो से क्या देखा है ? इसमें मुझसे शरमाने की क्या बात है ? हाँ, बताओ तुमने अपनी आँखो से क्या देखा है ?" मै दोनो हथेलियो से चेहरा ढाँप लेती, और लजाकर कहती 'गाँव में हम

सब भाई-बहन और मेरे माँ-बाप एक ही कमरे में सोते थे। रात में मेरे छोटे भाई-बहन तो सो जाते लेकिन मुझे नींद नहीं आती थी मैं नींद का बहाना किए चुपचाप लेटी रहती। रात में जब पिताजी प्यार करते तो माँ अक्सर इसी तरह किया करती थी। तुम्हें चुपचाप सुनते देखकर मैं चेहरे से हथेलियाँ हटा लेती और कहती 'इसके अलावा कभी-कभी मैं रात में बायवश बाहर निकलती तो बगल वाले कमरे से ताईजी की भी इसी तरह की आवाजें आया करती थीं। एक बार तो मैंने उनके दरवाजे की फाँक से झाँककर भी देखा था। तुम्हारे चेहरे पर आश्चर्य का भाव देखकर मैं आगे कहती इसी तरह मैंने रात के समय कई बार अपने चाचा के कमरे में भी झाँककर देखा है। एक बार दिन के समय मैंने चाची से इसके बारे में पूछा तो उसने हँसकर मेरे गाल पर चिकोटी काट ली और कहा कि रानीजी की शादी होगी तब पता लगेगा। मैंने तुमसे स्वीकार किया कि मुझसे चाची ने ही बताया था कि ऐसा नहीं करने से मर्द अपनी औरत को बेशरम समझता है इसलिए औरत को यही दिखाना चाहिए कि उसकी तो यह काम करने की बिलकुल इच्छा नहीं है वह तो केवल अपने मर्द को खुश करने के लिए ही यह करती है।

मेरी बात सुनकर तुम्हारा प्यार करने का उत्साह खत्म हो जाता और तुम मुझे समझाने के अन्दाज में कहते छि छि रानी कैसी बात करती हो तुम! भला, पति-पत्नी में इस तरह के दिखावे और धोखे की क्या जरूरत? पति-पत्नी के बीच यह एक सहज-स्वाभाविक कर्म है और इस कर्म को इसी सहज स्वाभाविक ढंग से करना चाहिए। पति-पत्नी एक-दूसरे के पूरक हैं और यह कर्म दोनों को ही समान रूप से शारीरिक और मानसिक तृप्ति देता है उन्हें पूर्णता प्रदान करता है उन्हें परस्पर और गहरे आत्मिक सूत्रों में जोड़ता है। फिर दोनों के बीच धोखे की इस विभाजक रेखा की क्या जरूरत है?

मैं तुम्हारी बात नहीं समझ पाती इसलिए विवश-सी अपनी वही बात

दुहरा देती "लेकिन सभी तो ऐसा करते हैं। मेरे माँ-बाप, ताऊ-ताई, चाचा चाची सभी को ऐसा करते मैंने स्वयं देखा है।

फिर भी तुम खीजते नहीं मुझे शांति से समझाने की कोशिश करते, 'इन्दो, पहले के जमाने में तुम्हारी बात लागू हो सकती थी आज भी जो अशिक्षित हैं वे इसी को ठीक समझते हैं लेकिन आधुनिक मनोविश्लेषण की खोजों से जो परिचित हैं वे इसे गलत समझते हैं।

मैं अब भी तुम्हारी बात का तात्पर्य नहीं समझ पाती फिर भी ऊपर से स्वीकृति और सहमति में सिर हिला देती।

इसके बाद तुम उस दिन और कुछ नहीं कहते कोई किताब पढ़ने लगते और पढ़ते-पढ़ते सो जाते।

तुम रात में खाने के बाद अक्सर पलँग पर लेटकर लिखते पढ़ते थे। मैं खुद भी खाकर और रसोई का काम निपटाकर तुम्हारे पास आ जाती, लेकिन तब तक काफी देर हो चुकी होती और मेरे पास साड़ी बदलने या कंघी आदि करने का समय नहीं रहता बल्कि सच तो यह है कि मैं इसे खास जरूरी भी नहीं समझती थी। परिणामतः जब तुम्हारे पास आती तो अक्सर वही दिन भर की मुची सिकुड़ी साड़ी पहने होती और चेहरा भी सुबह का ही धोया हुआ रहता। शुरू-शुरू में तो तुम इन बातों की ओर ध्यान नहीं देते थे, दरअसल तुम्हारा पूरा ध्यान मेरे हाथों और मेरी आँखों पर ही केंद्रित रहता था। लेकिन धीरे धीरे हाथों और आँखों के अलावा मेरी देह के अन्य अंगों की ओर भी तुम्हारा ध्यान जाने लगा। मुझे याद है एक दिन तुमने मेरे उलझे बालों की लटें सुलझाते हुए कहा था, देखो, नीति, तुम्हारे बाल किस कदर रूखे और उलझे हुए हैं। लगता है, तुमने कई दिनों से इनमें तेल नहीं डाला है और न ही कंघी की है।" तुम स्वयं उठकर 'बाथरूम' से हेयर क्रीम की

धीमी उठा लाये अपने हाथों में मेरे बालों में बहुत सारी क्रीम लगायी फिर कंघी से मेरे बाल सुलझाये तब उन लम्बे, चिकने और काले बालों को मेरे मुखड़े पर छितरा दिया तो उन बालों घटाओं में मेरा पूरा चेहरा छिप गया तुमने झुककर बालों के ऊपर से ही मेरे माथे को चूम लिया और कहा अब क्या तुम्हारे ये बाल कितने प्यारे लगते हैं ! तुमने बेकार ही इनसे दुगन कर रखी थी।

अपना समूचा चेहरा बालों में छिप जाने के कारण मुझे कमाल-कमाल लग रहा था। मैंने आँखों पर से बाल हटाने के लिए अपनी दोनों बाँहें उठाई तो पता नहीं क्या देखकर तुम सहसा दूर हट गये। मैंने बाँहें उठाये ही तुम्हारी ओर प्रश्न भरी निगाहों से ताका तो तुमने मेरी बगलों की ओर उंगली से इशारा करते हुए कहा छि छि कैसी दिखती हो तुम्हारी बगलों के पास से ब्लाउज़ कितना गन्दा है पसीने के पीले-पीले धब्बे हो गये हैं कैसी दुर्गन्ध आ रही है! मैंने सकोच से बाँहें नीची कर लीं और बगलों को अपनी हथेलियों से ढँक लिया। लेकिन तुमने जिद करके उसी समय मेरा ब्लाउज़ खुलवाया और जबरदस्ती मेरी बाहें ऊँची उठा दीं। वहाँ भूरे भूरे बेहद लम्बे और दुर्गन्ध भरे बालों को देखकर घृणा से तुम्हारे चेहरे की नसें तन गयीं। मैंने पहली बार तुम्हारे चेहरे पर यह भाव देखा था और मैं सहम उठी थी। लेकिन तुमने अपने ऊपर नियन्त्रण कर लिया और खीज भरी हँसी हँस कर इस तरह कहा गोया लाड़-प्यार में बिगड़े हुए किसी नादान बच्चे को डाँट-समझा रहे हो छि गन्दी कैसे रहा जाता है तुमसे इस तरह? तुम तत्काल उठकर अपना सेफ्टी रेज़र उठा लाये और ब्रश में शेविंग क्रीम लगाकर तुमने अपना हाथ मेरी बगलों की ओर बढ़ाया। हालाँकि मुझमें विरोध करने का साहस नहीं था फिर भी मैंने किसी तरह डरते डरते कहा बगल के बाल काटने से तो आँखें कमज़ोर हो जाती हैं? तुम इस पर झुंझला उठे और जबरदस्ती मेरी बाँह उठाकर बगल वाले भूरे गुच्छे पर साबुन लगाने लगे तथा साथ ही साथ बन्दबान

भी जाते थे, "पता नही, कहाँ-कहा की दकियानूसी बातें दिमाग में भरी हुई हैं एक हो तो कोइ उन्हें दूर भी करे, यहा तो समूचा भेजा इन्ही से भरा पडा है।'

मैंने पहली बार तुम्हारा यह झुझलाहट और खीज वाला रूप देखा था, इसलिए मन ही मन सुबक उठी थी। उसके बाद तुम तो जल्दी ही गहरी नींद में सो गये, लेकिन मुझे हर कोशिश के बावजूद काफी रात गये तक नींद नही आयी और मै रह रहकर तकिये में मुह छिपा कर सुबक उठती। पता नही कसे एक बार मेरा जी इतना भर आया कि अपने भीतर की रुलाई मुझसे किसी भी तरह रोके नहीं रुकी, और म रात के सन्नाटे में फफक फफक कर रो उठी। तुम नींद में हड़बड़ाकर उठ बैठे और मुझे यू रोती देखकर एक बार तो कुछ भी नही समझ पाये, हक्के-बक्के स मेरी ओर दखते रह गये, लेकिन दूसर ही क्षण पूरी स्थिति तुम्हारी समझ में आ गयी, और तुमने तडप कर मुझे अपनी बाहो में भीच लिया, सीने में छिपा लिया। म और भी फूट-फटकर रोने लगी। तुम अपने हाथो स मेरे आँसू पोछते जा रह थे मुझे दिलासा दे रह थे, और बार-बार मेरी पीठ और मेरा सिर सहला रह थे।

उस दिन तुमने मुझे चाह जितनी दिलासा दी हो, और अपने-आपको चाहे जितना धिक्कारा हो, लेकिन आज मुझे स्पष्ट महसूस हो रहा है कि उसी अभागे क्षण से मेरे दुर्भाग्य का श्रीगणेश हो गया था उसके बाद की एक एक बात मेरे इस कथन की पुष्टि करती है, हालाँकि उस दिन क बाद काफी दिनो तक तुम मेरे प्रति अपने व्यवहार में बहुत सतर्क और सहृदय रहने की कोशिश करते रह। जब कभी खीज या असन्तोष का कोई अवसर आता (और मर गँवारपन क कारण ऐसे अवसरो की कमी नहीं रहती थी।) तो तुम अपने ऊपर सप्रयास नियत्रण कर लेते और मुह स कुछ नही कहते लेकिन क्षण भर के लिए तुम्हारे चेहरे पर

आने वाला वह भाव मेरी आँखों से छिपा नहीं रहता और मैं मन ही मन भीग उठती।

इसके शायद दो-ढाई महीने बाद की बात है। उस दिन नौकरानी नहीं आयी थी, और मुझे चौका-बरतन का काम निपटाते निपटाते काफी रात बीत गयी। अपनी आदत के मुताबिक मैं उस रात भी रसोई से सीधी तुम्हारे पास चली आयी। तुम कुछ उद्विग्न-से थे। तुम्हारी छाती पर किताब उलटी पड़ी थी और तुम छत की ओर देखते कुछ सोचते-से लेटे थे। मैं चुपचाप आकर तुम्हारे पास बैठ गयी मैंने स्नेह से तुम्हारे बालों पर हाथ फेरा कनपटी की तनी हुई नसों को सहलाया। तुमने एक बार सूनी-सूनी निगाहों से मेरी ओर देखा फिर उमड़कर मुझे बाँहों में भर लिया।

लेकिन जिस फुर्ती से तड़पकर तुमने मुझे बाँहों में भरा था उसी फुर्ती से तड़पकर परे ढकेल दिया, करवट बदल कर लेट गये और तकिये में मुँह छिपा कर पता नहीं क्या बड़बड़ाने लगे।

मुझे इस तरह ढकेल जाना अच्छा नहीं लगा लेकिन तुम्हारी स्थिति से स्पष्ट था कि तुम्हें गहरी चोट लगी है, इसलिए मैंने अपनी भावना पर काबू किया और दुबारा निकट होकर तुम्हारे सिर पर हाथ फेरने लगी। तुम तड़पकर उठ बैठे, और सामने झूलते मेरी साड़ी के आँचल को दोनों हाथों में पकड़कर चर से चीर दिया। मैं रोने लगी तो तुम्हारा गुस्सा और भड़क उठा तुम लगभग चीखते हुए से बोले बेहया कहीं की! हज़ार बार कहा कि मेरे पास आओ तो ठीक से कपड़े बदलकर आया करो लेकिन मेरे कहे कि परवाह किसे है! जब आयेगी, दिन भर की वही सड़ी साड़ी पहने हुए जिसमें पसीने और आटे और तरकारियों की दुर्गन्ध आती रहती है!!

मेरी रुलाई रोके नहीं रुक रही थी, मैं बिलख बिलखकर रोये जा रही थी। तुमने कुछ देर झर झर झरते आँसुओं की ओर देखा, फिर अपेक्षाकृत नरम आवाज में बोले, मैंने कितनी बार और कितनी तरह से कहा है मीना, कि अब तुम शहर में एक पढे लिखे आदमी के साथ रहती हो। तुम्हें अपने गाँव-देहात की गदी आदतें छोड़ कर इस शहर की, और अपने आदमी के पसन्द-नापसन्द की बात समझनी चाहिएँ, उसका ध्यान रखना चाहिए, लेकिन तुम्हारे ऊपर कुछ भी असर नहीं होता।' फिर तुमने ठोडी के पास से मेरा चेहरा ऊँचा उठाकर कहा 'क्या मेरे पास आने के पहले तुमने कभी आइने में झाँककर अपना चेहरा देखने का कष्ट किया है? देखो तुम्हारे होठों के दोनों कोनों पर बर्फी के पीले दाग लगे हुए हैं लिपस्टिक लगाना तो दूर तुमने खाना खाकर ठीक से मुह तक साफ नहीं किया है। देखो, इन आँखों में जाले लटक रहे हैं शायद दोपहर में सोकर उठने के बाद इनमें पानी की एक बूद भी नहीं छुआई गयी है। क्या अपनी इन बडी-बडी और खूबसूरत आँखों को इसी तरह नष्ट कर डालोगी? क्या जिदगी भर इनमें काजल या सुरमे की एक रेखा तक नहीं खीचने की कसम खा ली है? ये गुलाब जैसे गाल पसीने की धारियों और धुएँ की कालिख से बदहाल हो रहे हैं। मैं पूछता हू आखिर इस शृगार-मेज पर सजे हुए क्रीम और पाउडर स्नो और लिपस्टिक रूज और काजल कघी और तेल और सेंट की शीशियों का क्या अचार डालोगी?'

बोलते-बोलते तुम्हारी आवाज फिर तेज होती गयी और आवेश के मारे तुम्हें आगे बोलना सभव नहीं रहा लगा तो तुम क्षण भर गुस्ताने के लिए रुक गये। फिर काफी शान्त आवाज में तुमने कहा, 'मैंने तुमसे कितनी बार कहा है रानी, कि मैं जब दफ्तर से लौटू तो तुम साफ-सुथरे कपडों और फूल की तरह ताजा खिले हुए चेहरे में मिलो, ताकि तुम्हें देखते ही मेरी दिन भर की थकावट और परेशानियाँ दूर हो जाएँ लेकिन तुम मेरी इस बात पर ध्यान देने की जरूरत ही नहीं समझतीं, और मैं जब

करीब घंटा भर बाद मैं नहा धोकर और धुले हुए कपड़े पहनकर लौटी तो तुम गहरी नींद में बेसुध सो रहे थे। तुम्हारे आदेशानुसार मैंने आईने के सामने खड़े होकर स्वयं को देखा और मुस्कराकर दोनों हथेलियों में अपना चेहरा छिपा लिया।

/

इसके अगले दिन शाम को करीब सवा छः बजे जब घंटी बजी तो अपनी साड़ी के आँचल से आँसुओं को पोंछते हुए मैंने स्वयं जाकर दरवाजा खोला। तुमने कदम दरवाजे के भीतर रखा और मुझे देखकर ठिठक खड़े रह गये पूरे दो मिनट तक खड़े हुए चकित-से मुझे देखते रहे। गुलाबी रंग की जरी की नयी साड़ी और वैसा ही ब्लाउज, समूचे चेहरे पर पुता हुआ सफेद पाउडर, गालों पर दूर-दूर तक फैला रूज, होठों पर लिपस्टिक की गहरी लाल तह जो होठों के ऊपर-नीचे और दाएँ-बाएँ फैली हुई थी, आँसुओं के कारण आँखों के बाहर तक बहकर आया काजल, बेतरतीब ढंग से बना हुआ जूड़ा और उसमें टेढ़ी-मेढ़ी लगी हुई चमेली के ताजा फूलों की वेणी तुम्हारे होंठ एक हल्की मुस्कान से विकृत होते-होते रह गये—शायद तुमने मेरी आँखों में छलछलाये आँसू देख लिये थे—तत्काल तुमने वह विकृत मुस्कान होठों के भीतर दबा ली, लपक कर मुझे बाहों में भींच लिया और लिपस्टिक लगे मेरे गहरे लाल होठों को कई महीनों बाद उस दिन, खूब प्यार से चूम लिया। फिर मुझे अपने से सटाये और बाँह के घेरे में समेटे-समेटे अपने पढ़ने के कमरे में ले गये और हाथ की किताबें और कागजात मेज पर रखकर मुझे दोनों कंधों से पकड़ कर मेरी काजल-पुती आँखों में झाँकते हुए उत्साह से भरकर कहा शाबाश! शुरू-शुरू में तुम्हें यह सब अजीब लग रहा होगा, अभ्यास नहीं होने से आज इनका उपयोग जरा असंतुलित भी हो गया है, लेकिन धीरे धीरे सब ठीक हो जायेगा, तुम्हें इनका सही उपयोग आ जायेगा तब देखना, स्वयं तुम्हें ही यह सब कितना अच्छा लगता है! इसके बाद तुमने मेरे रूज और पाउडर पुते गाल पर प्यार से शुरू दिनों

की तरह एक हल्की चपत लगाई और कहा 'जाओ, अब अच्छी रानी-बिटिया की तरह मेरे लिए एक कप गरम-गरम चाय ले आओ।'

रात में तुम सदा की तरह लेटे हुए कुछ लिख रहे थे जब मैं सफेद रेशमी साड़ी और ब्लाउज पहने तथा ताजा धुले हुए रेशमी केशों को पीठ पर लहराये कमरे में दाखिल हुई। तुम शायद मेरा ही इन्तजार कर रहे थे मेरे भीतर कदम रखते ही तुमने उत्साह में पलँग से उछलते हुए दोनों बाँहें फैला कर मेरा स्वागत किया। रेशमी साड़ी-ब्लाउज में आवृत, रेशम जैसी चिकनी मेरी देह को अपनी बाहों में भींचते हुए तुमने मेरे रेशमी केशों में अपना मुँह छिपा लिया। फिर मुझे बाहों में लिये-लिये ही शृंगार मेज वाले आईने के सामने ले गये। मुझे आईने के सामने की ओर करके, स्वयं मेरी पीठ से सटकर खड़े हो गये और पीछे से दोनों बाँहों का हार मेरे गले में डाल कर उल्लसित आवाज में बोले 'देखो खुद ही देखो, क्या एकदम श्वेतपरी-सी नहीं लग रही हो?" मैंने शरमाकर तुम्हारे सीने में अपना मुँह छिपा लिया। अरसे बाद मेरी आँखें एक बार फिर खुशी से छलछला आयीं।

उस रात तुम अपने शुरू दिनों वाले उत्साह से मुझे प्यार कर रहे थे मेरी देह को सहला-पुचकार रहे थे। थोड़ी देर में ही तुम्हारा अंग अंग उत्तेजना से फड़कने लगा तुम उठकर शृंगार मेज की दराज से रबड़ की पतली नली निकाल लाये। इसके पहले भी तुम सदा इसका उपयोग करते आये थे—हालाँकि मुझे इससे घिन लगती थी, लेकिन तुम्हारी नाराजी का खयाल करके मैंने कभी विरोध नहीं किया था। आज तुम्हें अच्छे मूड में देखकर मैंने कहा, "हमें यह नली बिल्कुल अच्छी नहीं लगती। तुमने हँसकर उत्तर दिया 'अच्छी तो मुझे भी नहीं लगती लेकिन इसका उपयोग जरूरी है। मेरी आँखों में प्रश्नवाचक चिन्ह देखकर तुमने हैरत से पूछा अरे, तो क्या तुम्हें यह भी नहीं पता कि मैं आज तक इसका उपयोग क्या करता आ रहा हूँ?' मेरे इन्कारी में

सिर हिलाने पर तुम्हारे चेहरे पर एक बार खिन्नता का भाव उभर आया, फिर तुमने पैकेट ऊपर उछाल कर उसे कैच करते हुए कहा, 'तुम सचमुच प्रकृति-पुत्री हो! आधुनिक दुनिया की किसी भी बात का तुम्हें पता नहीं। समझ में नहीं आता कि यह सब सीखने के लिए तुम्हें किस स्कूल में भरती कराऊँ। अरी पगली, यही तो है वह जादुई चीज़ जिसके प्रताप से हम लोग अभी तक बच्चा-बच्ची की झंझटों से निश्चिन्त होकर सुख शान्ति से जीवन-यापन कर रहे हैं।'

मैंने अचानक उठने की कोशिश करते हुए कहा, 'तो क्या इसके उपयोग से बच्चे नहीं होते?'

तुमने समझाया, 'एक ज़माना था जब सन्तानोत्पत्ति को हम अपने अधिकार की सीमा के बाहर समझते थे... समझते थे कि सन्तान का होना या नहीं होना भगवान की मर्जी पर निर्भर है। लेकिन आज विज्ञान ने सन्तान का होना या नहीं होना इन्सान की मर्जी पर निर्भर कर दिया है।'

मैंने तुम्हारे इस भाषण का एक शब्द भी नहीं सुना... उसी तरह अपना पहला प्रश्न दुहरा दिया, 'तो क्या इसके लगाने से बच्चे नहीं होते?'

तुमने अधिक समझाने का प्रयत्न व्यर्थ समझकर सहज स्वीकृति में सिर हिला दिया।

मेरे लिए अब लेटे रहना संभव नहीं था। एक झटके में उठकर बैठ गयी और आवेश में तुम्हारा हाथ पकड़कर पूछा, 'तो क्या अब तक तुमने जान-बूझकर बच्चे का होना रोक रखा था?'

तुमने एक बार फिर स्वीकृति में सिर हिला दिया, कुछ बोले नहीं, क्योंकि अपने काम के समय तुम्हें यह बाधा अच्छी नहीं लगी। तुम जल्द से जल्द इस प्रसंग को खत्म करना चाहते थे।